

श्रीसाधनामृतचान्द्रिका

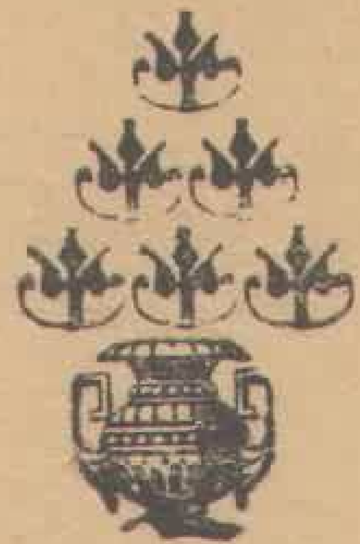
(गौड़ीय वैष्णवीय नित्यकृत्योपासना पद्धतिः)







सिद्ध श्रीकृष्णदास तातपाद विरचिता—



20/

श्रीहरिदासशास्त्री

सङ्गणक संस्करणं दासाभासेन हरिपार्षददासेन कृतम्

● प्रकाशक :—

श्रीहरिदासशास्त्री

अध्यक्ष :—

मानव चैतन्य शिक्षा समिति (रजि०)

श्रीहरिदास निवास

कालीदह

वृन्दावन

★ प्रथम संस्करण—२००० प्रतियां

सं० १९३४, श्रीरामनवमी ।

प्रकाशन सहायता ४)

● मुद्रक :—

श्रीहरिदासशास्त्री

श्रीगदाधर गौरहरि प्रेस

श्रीहरिदासनिवास, कालीदह वृन्दावन ।



सिद्ध श्रीकृष्णदास तातपाद विरचिता—

❃ श्रीसाधनामृतचन्द्रिका ❃

(गौड़ीय वैष्णवीय नित्यकृत्योपासना पद्धतिः)



श्रीधाम वृन्दावनस्थ खेलातीर्थ निवासिना

न्याय वैशेषिक शास्त्री नव्य न्यायाचार्य्य, काव्य, व्याकरण, सांख्य-मीमांसा-वेदान्त, तर्क-तर्क-तर्क वैष्णवदर्शन तीर्थ, विद्यारत्नादि विरुदावल्यङ्कृतेन

श्रीहरिदासशास्त्रिणा

सम्पादिता



★ सद्ग्रन्थ प्रकाशक—

श्रीगदाधर गौरहरि प्रेस

श्रीहरिदास निवास

कालीदह वृन्दावन ।



❀ श्री श्रीगदाधर गौराङ्गौ जयतः ❀

❀ पूर्व्वभाष

श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु के परिकर श्रीमत् सिद्ध कृष्णदास तातपाद ने
प्रस्तुत पद्धति ग्रन्थ का प्रणयन किया है, श्रीगौड़ेश्वर वैष्णवगण ब्राह्ममुहूर्त्त से
नक्त पर्यन्त जागरण शयनादि निखिल अवस्था में निरन्तर श्रीहरिनाम
संकीर्त्तन के साथ ही श्रवण मननादि भक्त्यङ्ग के अवलम्बन के द्वारा श्रीकृष्ण
भजन के लिए साधक को उपदेश किए हैं। अष्टयाम श्रीनामकीर्त्तन, अर्च्चन-
मननादि का सुशैली पूर्वक वर्णन जिस ग्रन्थ में है वह ही पद्धति नाम से ख्यात
है, श्रीगौड़ेश्वर वैष्णव सम्प्रदाय में अनेक विध पद्धति पुस्तक होने परभी सर्व-
सम्मति से मुख्यतः प्रस्तुत पद्धति ग्रन्थ ही सर्वत्र साधक समाज में समादृत हैं।

प्रेमभक्ति कादम्बिनी संप्लावितान्तःकरण श्री श्रीकृष्ण चैतन्यानुगत
पार्षदगण विरचित निखिल ग्रन्थरत्न की भाव धारा, विशुद्ध भजन पथ निर्देश
के लिए, प्रेमभक्ति संसूचन एवं रसराज-महाभाव-मूर्त्त श्रीविग्रह की प्रेमसेवा
परिपाटी-दिग्दर्शन के लिए ही है, इस विषय में किसी का भी मतद्वैध नहीं है,
इन सव का अन्तिमानुबन्ध प्रेम ही है, मुक्ति एवं त्रिवर्ग नही है, प्रेम नित्य-
सिद्ध परमानन्दमूलक भाव वर्य्य है। सान्द्रानन्द विशेषात्मा, सम्यङ्मसृणित-
स्वान्तः-ममत्वातिशयाङ्कित रूप से जिसका सुविस्तृत वर्णन "श्रीभक्तिरसामृत-
सिन्धु" में है।

उक्त प्रेम नित्यसिद्ध होने पर भी श्रवण-कीर्त्तनादि शोधित चित्तदर्पण
में प्रकटित होता है, अतएव श्रीगौरेश्वर वैष्णवगण नवविध भक्त्यङ्ग आचरण
की अतिशय प्रयोजनीयता का अनुभव करते हैं, यह ही प्राचीन विद्वानों का
सिद्धान्त है।

स्मरण, नवविध भक्त्यन्तर्गत उपनिषदुक्त निदिध्यासन ही है, जहाँ
तैलधारावद् अविच्छिन्न प्रवाह सन्तति के द्वारा अभीष्ट ध्येय वस्तु के नाम, रूप,
गुण, लीला आदि का स्फुरण, सुष्ठु आवेश, वाह्याभ्यन्तरराग-सुविलापन भी
होता है, "तस्मात् केनाप्युपायेन मनः कृष्णे निवेशयेत्" "कृष्णं स्मरन्
जनश्चास्य प्रेष्ठं निज समीहितम्" न्याय के अवलम्बन से स्वानुभूत लीलासमूह

❀

का यत् किञ्चित् मात्र दिग्दर्शन के लिए त्रिताप तापित कलि कलुषहत जीव समूह के प्रति हितेच्छु होकर कारुण्यैक घनाघन स्वरूप अष्टयामिक लीलामृतावगाहन की व्यवस्था सज्जनों ने दी है, एवं तदुपयोगि लीलारस परिवृंहित ग्रन्थ समूह का विरचन भी किया है। यह सव पद्धति स्व कपोल कल्पित नहीं है, पण्डितगण के निर्णय में पद्म पुराणीय पाताल खण्डस्थ द्वि पञ्चाशत्तमाध्याय एवं सनत्कुमार संहिता ही उक्त अष्टकालीन लीला का मूल उत्स है, इसके अवलम्बन से मुख्यतः श्रीमत् कृष्णदासगोस्वामि चरण ने 'श्रीगोविन्दलीलामृत, ग्रन्थ में, श्रील कवि कर्णपूर गोस्वामि चरण ने 'श्रीकृष्णाह्निक कौमुदी' ग्रन्थ में, एवं श्रीविश्वनाथचक्रवर्त्ती पाद ने 'श्रीकृष्ण भावनामृत' ग्रन्थ में अष्टकालीन लीला प्रवाह का विस्तार किए हैं।

अष्टयामिक लीला शब्द से श्री श्रीगौरगोविन्द को अवलम्बन कर निशान्त, प्रातः, पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न, सायाह्न, प्रदोष, नक्त भेद से दैनन्दिन लीला कलाप को ही जानना होगा। यहाँपर विशेष ज्ञातव्य यह है कि उक्त सव ग्रन्थ नित्यलीला पारावार का कणमात्र वर्णन में ही चरितार्थ हुए हैं, क्योंकि सहस्रवदन भी इन लीला का सम्पूर्ण वर्णन में असमर्थ हैं। इसलिए महानुभाववृन्द की लीला वर्णन में भी विशेष पार्थक्य परिलक्षित है, साधक यदि उक्त प्रदर्शित पथ के आनुगत्य से महासौभाग्योद्रेक से लीला विशेष में आकृष्ट मानस होता है, एवं एक ही लीला के चिन्तन में दिन-रात विभोर होता है, तव कुछ भी हानि, अथवा त्रुटि नही होगी, ऐसा आवेश ही एकमात्र काम्य है। आवेश वृद्धि की गाढ़ता-तारतम्य के द्वारा ही भावसिद्धि की अग्रगति का भी अनुमान होगा।

इतिवृत्त पर्यालोचना से स्पष्टतः यह प्रतीति होती है कि गौड़ीय वैष्णवों की भावधारा त्रिधा विभक्त होकर श्रीश्रीगौरगोविन्द सेवा स्मरणादि का निर्वाह करती है। प्रथमतः श्री श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु प्रेरित गोस्वामिगण श्री श्रीगौर चरित चिन्तन में समाकृष्ट मानस होकर भी उनकी आज्ञा से श्री श्रीराधा–गोविन्द सेवा स्मरण पीयुष वारिधि में निमज्जित है, इन सवकी रचना भी वाहुल्य से उक्तार्थ का ही प्रकाश करती है, द्वितीयतः अखण्ड कीर्त्ति श्रीखण्ड-वास्तव्य श्रीमन्नरहरि प्रमुख, श्रील सेन शिवानन्द चरण, ससौदर्य-श्रीलश्रीवास पण्डित, श्रील प्रबोधानन्द चरण, तथा श्रील वासुदेवसार्वभौम प्रभृति श्री श्री कृष्ण चैतन्य पादाम्बुज सुधाम्बुराशि का चिन्तन में संलीनमानस होकर भी कदाचित् स्वेच्छा से श्रीराधाकृष्ण पादाम्बुज माध्वीक का भी आस्वादन करते हैं। तृतीयतः श्रीनिवासाचार्य, श्रीनरोत्तमठाकुर, श्रीश्यामानन्दप्रभु, श्रीगोवर्द्धन

निवासी सिद्ध (द्वितीय) श्रीकृष्णदास प्रभृति ने श्री श्रीगौराङ्ग सेवा चिन्तन के साथ श्रीराधाकृष्णलीलारससागर में निमज्जन की सूचना की है, विशेषतः श्री-श्रीनिवासाचार्य चरण ने लीलाद्वयामृत सागर में निमज्जित होकर स्मरण-लब्ध प्रसादरत्न को आहरण करके समस्त जनता के नयन गोचरीभूत किए थे, यह प्रसङ्ग "श्रीभक्तिरत्नाकर" ग्रन्थस्थ ६।१२८-१६५ में प्रसिद्ध है। श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय ने भी श्री श्रीगौरविधु की प्रकटाप्रकट लीलापरिकर नक्षत्र माला वेष्टित सुधाचन्द्रिका के द्वारा जनता के मनोमुकुर में चिर सञ्चित तमो-राशि का सम्मार्जन किए थे। सिद्ध द्वितीय श्रीकृष्णदास महोदय ने भी "भावना सार संग्रह" आदि ग्रन्थ में श्री गौरलीला चिन्तन के साथ ही श्री श्रीराधा-कृष्णलीला चिन्तन की व्यवस्था दी है। एवं स्वतः परतः आचरण के द्वारा प्रचार भी किए थे। इस प्रकार प्रस्थानत्रय की किसी भी एक रीति के अव-लम्बन से भजनरत साधक की भजन-परिपाक से इष्ट प्राप्ति सुनिश्चित है।

रस कीर्त्तन के प्रारम्भ में गौड़भाषा निबद्ध पदावली में तदुचित गौरचन्द्र नाम से प्रसिद्ध कीर्त्तन रीति भी सामाजिक के एकमात्र आस्वादन का विषय रूप में प्रसिद्ध है। श्रीमद् गौराङ्गविधु की अष्टयामिक लीलासूत्र का प्रणयन श्रीरूपगोस्वामि चरण ने, एवं श्रीविश्वनाथ चक्रवर्त्ती ने संस्कृत भाषा में, श्रीनरहरिचक्रवर्त्ती ने गौड़ीय भाषा में किया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में युगपत् मन्त्रमयी एवं स्वारसिकी उपासना की इङ्गित है, यह ग्रन्थ १७५० शकाब्द में रचित हुआ है, ग्रन्थकार कृत श्रीभावनासार संग्रह, प्रार्थनामृत तरङ्गिनी, श्री श्रीगौरगोविन्दार्च्चन पद्धति ग्रन्थ भी सत्वर प्रकाशित होने की सम्भावना है।

हरिदासशास्त्री।



***

✽ श्रीश्रीगदाधरगौराङ्ग ★ श्रीराधागोविन्ददेव ✽

ॐ

★ विषय–सूची ★

※ प्रथम प्रकाश ※ (निशान्त कृत्य)

※ द्वितीय प्रकाश ※ (प्रातःकृत्य)





श्रीश्रीगौरगदाधरौ विजयेताम्

सिद्ध श्रीकृष्णदास बावा कृत–

श्रीसाधनामृतचन्द्रिका

(प्रथमः प्रकाशः)

अथ–नित्यकृत्यानि लिख्यन्ते," श्रीकृष्णस्वरूप निरूपण के अनन्तर वैष्णवों का नित्य कृत्य लिखते हैं ।

१ साधक ब्राह्म मुहूर्त्त में जागकर "कृष्ण कृष्ण" इत्यादि का कीर्त्तन करे ।...

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे ।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे ॥
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण पाहि माम् ।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण रक्ष माम् ॥

ततः श्रीगुरुं प्रणम्य पृथिवीं प्रार्थयेद्—
तदनन्तर श्रीगुरुदेव को प्रणाम करके पृथिवी को प्रार्थना करे ।

समुद्रमेखले देवि ! पर्व्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥

हे समुद्र मेखले ! हे पर्व्वत स्तनमण्डले ! हे देवि विष्णु पत्नि ! आपको नमस्कार करता हूँ । पादस्पर्श जनित अपराध क्षमा करें ।

२ ततोः बहिर्यातः पादौ पाणी च प्रक्षाल्य दन्तधावनं कुर्य्यात् । ततो रात्रिवस्त्रं परित्यज्यान्यवस्त्रं परिधायाचमन कृत्वा गृहमध्ये शुद्धासने पूर्व्वाभिमुख्युपविश्य पुनराचम्य निजाभीष्टमन्त्रं स्मरेत् । ततोः निश्चलमनाः श्रीगुरुदेवं स्मरेत् । यथा यामले—

कृपामरन्दान्वितपादपङ्कजं, श्वेताम्वरं गौररुचिं सनातनम् ।
शन्दं सुमाल्याभरणं गुणालयं, स्मरामि सद्भक्तिमयं गुरुं हरिम् ॥
ततश्च—अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

इत्युक्त्वा श्रीगुरुं प्रणमेत् ।

२ अनन्तर साधक बाहर जाकर हस्त पद धौतपूर्व्वक दन्तधावन करे । एवं रात्रिवस्त्र परित्याग करके अन्य वस्त्र परिधान पूर्वक आचमन करके गृहमध्ये

शुद्धासन में उपवेशन करे, एवं पुनराचमन करके निजाभीष्ट मन्त्र स्मरण पूर्व्वक निश्चल चित्तकेद्वारा श्रीगुरुदेव को स्मरण करे। जिनके चरण कमल कृपा-मकरन्दसे पूर्ण है, जो शुक्लाम्बर धारी है, गौंर कान्ति, सुमाल्यसे भूषित, गुणालय एवं मङ्गलप्रद है, उन नित्यतनु सद्भक्तिमय श्रीगुरुरूपी हरि का स्मरण करता हूँ। अनन्तर "अज्ञान तिमिरान्धस्य" श्लोक पाठ करके श्रीगुरुदेव को प्रणाम करे,—जिन्होने अज्ञानतिमिर से अन्ध मादृश जनके चक्षु को ज्ञाना-ञ्जन-शलाका के द्वारा उन्मीलित किया है उन गुरुदेवको प्रणाम करता हूँ।

३ ततश्च प्रणामवाक्यानि पठित्वा श्रीपरमगुर्व्वादीन् प्रणमेत्।

अनन्तर प्रणाम वाक्य समूह पाठकर श्रीपरमगुरु आदिको प्रणाम करे। प्रणाम वाक्य समूह निम्नोक्त प्रकार है।

प्रणामवाक्यानि यथा—

पदाब्जमहसा महाकुमतिता-तमोनाशकं
व्रजप्रणयसुश्रियं प्रणततापसंहारकम्।
व्रजेन्द्रतनयप्रियं मधुरमूर्त्तिमाह्लादकं
नमामि परमं गुरुं भवसमुद्र-सन्तारकम्॥

इति परमगुरुभ्यो नमः। अर्थ—परमगुरुको नमस्कार। जो स्वीय पदाब्ज ज्योति के द्वारा महाकुमतिरूप अन्धकार को नाश करते है, जो व्रज प्रणय शोभा से सुशोभित हैं, प्रणत जनगणका तापसंहारक, भवसमुद्रसंतारक, आनन्ददाता व मधुरमूर्त्ति हैं एवं श्रीकृष्णके परमप्रिय हैं, उन परमगुरुदेवको प्रणाम करता हूँ।

४ **राधाव्रजेन्द्रात्मजभावमूर्त्तये, वृन्दावनप्रेमसुखामरद्रवे।**
कारुण्यवारां निधये महात्मने, परात्परस्मै गुरवे नमो नमः॥

इति परात्परगुरुभ्यो नमः। अर्थ—इति परात्पर गुरुका प्रणाम। जो श्रीराधाकृष्ण की भावमूर्त्ति व वृन्दावनीय प्रेमसुख कल्पद्रुम है, वह कृपासमुद्र परात्पर श्रीगुरुदेवको प्रणाम करता हूँ।

५ **महामहिमवन्दितं सकलसत्त्वभद्राकरं**
व्रजेन्द्रसुतसेवनप्रणयसीधुविश्रम्भरम्।
कृपामयकलेवरं रसविलासभूषाधरं
नमामि परमेष्ठिनं गुरुमहं सदा शङ्करम्॥

इति परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः। अर्थ—इति परमेष्ठि गुरुको प्रणाम। जो महा-महिमा में वन्दित, सकल प्राणियों का मङ्गलाकर कृपासेवारूप प्रेमामृत प्रदान के द्वारा सब को पालन करते है, रस विलास भूषाके द्वारा विभूषित, कृपामय

कलेवर एवं सर्वदा शुभप्रद है, उन परमेष्ठिगुरुदेव को प्रणाम करता हूँ।

६ इस प्रकार क्रमसे सकल गुरुवर्ग को प्रणाम कर वद्धाञ्जलि होकर श्रीगुरुचरण में शरण प्रार्थना करे —

त्रायस्व भो जगन्नाथ गुरो संसारवह्निना।

दग्धं मां कालदष्टञ्च त्वामहं शरणं गतः ॥इति।

हे श्रीगुरो ज्ञानद दीनबन्धो, स्वानन्ददातः करुणैकसिन्धो।

वृन्दावनासीनहितावतार, प्रसीद राधाप्रणयप्रचार ॥ इति

हे श्रीगुरो! जगन्नाथ! मैं संसारानल से दग्धहूँ, एवं कालरूप सर्प दंशन से मृततुल्य होकर आपकी शरणागत हूँ, मुझको त्राण करें, हे ज्ञानद! हे दीनबन्धु हे स्वानन्द दाता करुणैकसिन्धु! आप श्रीवृन्दावन में अवस्थान करकेभी मादृश जीवके कल्याण के लिए अवतीर्ण होकर श्रीभानुनन्दिनी की श्रीकृष्ण प्रीति को प्रचार करते हैं। आप मेरे प्रति प्रसन्न हों।

७ ततः श्रीकृष्णचैतन्यमहाप्रभोः प्रणाम :—

आनन्दलीलामयविग्रहाय हेमाभदिव्यच्छविसुन्दराय।

तस्मै महाप्रेमरसप्रदाय चैतन्यचन्द्राय नमो नमस्ते ॥ इति।

यस्यैव पादाम्वुजभक्तिलभ्यः, प्रेमाभिधानः परमः पुमर्थः।

तस्मै जगन्मङ्गलमङ्गलाय चैतन्यचन्द्राय नमो नमस्ते ॥

७ अनन्तर श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु का प्रणाम,— हे आनन्दलीलामय विग्रह! हे स्वर्णकान्तिविजयिदिव्यच्छविसुन्दर! हे महा प्रेमरसप्रदा चैतन्यचन्द्र! आपके श्रीचरणों में प्रणाम है। जिनके पदाम्वुज की भक्तिसे ही परम पुरुषार्थ कृष्णप्रेम लभ्य होता है। जगन्मङ्गल का भी मङ्गलकारी उन चैतन्य चन्द्रको नमस्कार करता हूँ।

८ ततो विज्ञापनम्—प्रणामान्तमें विज्ञापन—

संसारदुःखजलधौ पतितस्य कामक्रोधादिनक्रमकरैः कवलीकृतस्य।

दुर्वासनानिगड़ितस्य निराश्रयस्यचैतन्यचन्द्र मम देहि पदावलम्वम्।

हे चैतन्यचन्द्र! संसार समुद्रमें पतित होकर काम क्रोधादिरूप नक्र मकर से कवलित हुआ हूँ, निराश्रय मुझको पदावलम्वन प्रदान करें।

९ ततः श्रीनित्यानन्दप्रभोः प्रणाम :—

औदार्य्येण सुकामधेनुदिविषद्वृक्षेन्दुचिन्तामणि—

वृन्दं ब्रह्मसुखञ्च सुन्दरतया कन्दर्पवृन्दं प्रभुम्।

वात्सल्येन सुमातृधेनुनिचयं विस्पर्द्धिनं नन्दिनं
नित्यानन्दमहं नमामि मधुरप्रेमाब्धिसंवर्द्धिनम् ॥ इति

९ अनन्तर श्रीनित्यानन्द प्रभुका प्रणाम। जो औदार्य्य में सुकामधेनु, श्रेष्ठ कल्पवृक्ष व चिन्तामणि वृन्दको, एवं सौन्दर्य में कन्दर्प समूह को, तथा वात्सल्य गुणमें सुमातृवृन्द व धेनु निचयको पराभूत करते है, यद्दत्त भजनानन्द के आस्वादन से ब्रह्मानन्द भी तुच्छ रूपमें प्रतिभात होता है, वह मधुर प्रेमसमुद्र वर्द्धन कारी श्रीनित्यानन्द प्रभुको प्रणाम करता हूँ।

विज्ञापनं यथा—

हाड़ाइपण्डिततनूज कृपासमुद्र, पद्मावतीतनय तीर्थपदारविन्द।
त्वं प्रेमकल्पतरुरार्त्तिहरावतार, मां पाहि पामरमनाथमनन्यबन्धुम् ॥

हे पद्मावतीनन्दन ! हे तीर्थपदारविन्द ! हे आर्त्तिहरावतार! प्रेमकल्पतरो! मैं पामर अनाथ, अनन्यबन्धु हूँ, मुझे रक्षा करें।

१० ततः श्रीअद्वैतप्रभोः प्रणतिः—

येन श्रीहरिरीश्वरः प्रकटयाश्चक्रे कलौ राधया
प्रेम्णा येन महेश्वरेण सकलं प्रेमाम्बुधौ प्लावितम्।
विश्वं विश्वप्रकाशिकीर्त्तिमतुलं तं दीनबन्धुं प्रभु-
मद्वैतं सततं नमामि हरिणाद्वैतं हि सर्व्वार्थदम् ॥ इति

अनन्तर श्रीअद्वैत प्रभुकी प्रणति— जो श्रीराधा के साथ श्रीहरि को कलियुग में प्रकट करके तदीय प्रेम समुद्र के द्वारा सकल विश्वको प्लावित करते हैं, जो श्रीहरि के साथ अभिन्न है, सर्वार्थद है, एवं विश्व विकाशि-अतुल-कीर्त्तियुक्त है, उन महेश्वर श्रीअद्वैत प्रभुको प्रणाम करता हूँ।

विज्ञप्तिः—

अद्वैत ते करुणया प्रणयावलोकैः
के वाभवन्न हि शचीतनयस्य दासाः।
प्रेमाम्बुधौ च सहसा वत के न मग्ना
आशापि नो भवति मे वत किं ब्रवीमि ॥ इति ॥

हे अद्वैत प्रभो ! आपको कृपा व प्रणयावलोकन को प्राप्त होकर कौन व्यक्ति श्रीशचीनन्दन का दास नहीं हुआ है, प्रेमसमुद्र में कितने भी निमग्न हुए हैं। हाय मैं क्याबोलूँ, उस विषय में मेरी आशा भी नहीं है।

११ । श्रीगदाधरपण्डितस्य प्रणामः—

यत्पादाब्जनखाग्रकान्तिलवतो ह्यज्ञानमोहक्षयं
यत्कारुण्यकटाक्षतः स्वयमसौ श्रीगौरकृष्णो वशम् ।
यातीषद्भजनाच्च यस्य जगतां प्रेमेन्दुरन्तर्नभो
तौमि श्रीलगदाधरं तमतुलानन्दैककल्पद्रुमम्।। इति

श्रीगदाधर पण्डित गोस्वामी का प्रणाम मन्त्र,— जिनके पादाब्ज नखाग्र कान्ति लेश से अज्ञान मोह क्षय होता हैं, जिनके कारुण्यकटाक्ष से स्वयं श्रीगौर-कृष्ण वशीभूत होता हैं, जिनको ईषत् भजन प्रभावसे जगद्वासी जनगण के अन्तर आकाश में प्रेमचन्द्र प्रकाशित होता है, जो अतुलानन्दैक कल्पद्रुम है, उन श्रीगदाधर पण्डित गोस्वामी प्रभुको प्रणाम करता हूँ ।

विज्ञापनम्– हे हे गदाधर ! दयासरितां पतिस्त्वं
प्रेम्णा वशीकृतशचीतनयो विभुश्च ।
पद्मावतीतनय एव तथा वशी ते
किं ते ब्रवीमि मयि पामरके कृपायै ।। इति ।।

हे कृपासमुद्र श्रीगदाधर ! आपने प्रेम के द्वारा विभु श्रीशचीतनय एवं श्रीपद्मावती तनय को वशीभूत किया है, आपको क्या निवेदन करूँ, इस पामर के प्रति आपका कृपालेश उदित हो ।

१२ । श्रीश्रीवासादीनां प्रणामः —

ये तीर्थप्रमिताः पुनन्ति जगतः सद्वैद्यकल्पाः प्रति
कुर्व्वन्तीन्दुनिभाः कृपामृतरुचोऽप्याप्याययन्ति स्वयम् ।
सुस्निग्धा हरिचन्दनानि कलन्त्याभूषयन्त्यद्भुता
रत्नानीव हि तान्नमामि सततं श्रीवासमुख्यान् मुहुः ।।

श्रीवासादि भक्तवृन्द का प्रणाम मन्त्र— जगत् को पवित्र करने के लिए जोसव तीर्थतुल्य हैं, जोसव भवरोग नाश के प्रति सद्वैद्य तुल्य हैं, कृपामृत किरण के द्वारा जगत् को आप्यायित करने के लिए चन्द्र सदृश हैं, जो सव हरिचन्दन के समान सुस्निग्ध हो कर जगत् को सुशीतल करते हैं, एवं रत्न-स्वरूप होकर जगत् को विभूषित करते हैं, उन श्रीवास प्रमुख भक्तगण को नमस्कार करता हुँ ।

विज्ञापनम्– हे श्रीवासादय इह कृपामूर्त्तयो गौरकृष्ण–
प्रेमाम्बुधेः सुरविटपिनः शान्तसौम्यस्वभावाः ।

दीनोद्धारे प्रबलनियमाः प्रेमदा यूयमेव
तस्मादज्ञं प्रपदरजसा पापिनं मां पुनीत ।। इति ।।

हे कृपामूर्त्ति श्रीवासादि भक्तगण ! आप सब श्रीगौरकृष्ण-प्रेमसमुद्र से कल्पतरु के समान प्रकट होकर दीन व्यक्तिगणको श्रीकृष्ण प्रेम प्रदान के द्वारा उद्धार करने के लिए प्रबल नियम किए हैं, सुतरां मादृश अज्ञ पामरको पद-धुलि प्रदान करके कृतार्थ करें।

१३ । श्रीनवद्वीपस्य प्रणामः ।

नवीनश्रीर्भक्ति नवकनकगौराकृतिपर्ति
नवारण्यश्रेणीं नवसुरसरिद् वातवलितम् ।
नवीनश्रीराधाहरिरसमयकीर्त्तनविधिं
नवद्वीपं वन्दे नवकरुणमाद्यं नवरुचिम् ।। इति ।।

श्रीनवद्वीप धामका प्रणाम मन्त्र'— जहाँ पर नवीन भक्ति सम्पद् व नव कनकगौराकृति प्रभु हैं, जहाँ मधुर समीरण से तरङ्गित नव सुरसरित् विराजित हैं, नवीन श्रीराधाहरिरसमय कीर्त्तनविधि भी विद्यमान है, नवारण्य श्रेणीयुक्त नवरुचिसम्पन्न व नवकरुण त्रह श्रीनवद्वीप धाम को वन्दना करता हूँ ।।

१४ । श्रीगङ्गायाः प्रणामः ।

नवद्वीपारामप्रकरकुसुमामोदवलितां
स्फुरद्रत्नश्रेणीचिततट-सुतीर्थावलियुताम् ।
हरेर्गौराङ्गस्यातुलचरणरेणूक्षिततनुं
समुद्यत्प्रेमोर्म्मि तुमुलहरिसंकीर्त्तनरसैः ।।
प्रभुक्रीड़ापात्रीममृतरसगात्रीमृषिघटा-
शिवब्रह्मेन्द्रादीड़ितमाहात्म्यमुखराम् ।
लसत्किञ्जल्काम्भोजनि-मधुपगर्भोरुकरुणा-
महं वन्दे गङ्गामघनिकरभङ्गाजलकणाम् ।। इति ।।

श्रीगङ्गा प्रणाम मन्त्र— जो श्रीनवद्वीपस्थ उपवन समूह के कुसुमामोद से पूर्ण है, जिसके तट-प्रदेश शोभनरत्नावलि रचित और सुतीर्थावलि युक्त हैं, जो श्रीगौरपदरेणु अङ्ग में धारण करके और तुमुल श्रीहरिसङ्कीर्त्तनरस प्राप्त करके तरङ्गमाला विस्तार कर रहो है, जो श्रीगौराङ्ग की क्रीड़ापात्री और अमृतरसमयगात्री हैं, जिसकी महिमा ऋषिगण और देवगण की स्तुति से मुखरित हो रही हैं, मधुपगण परिसेवित नलिनीवृन्द से जो सुशोभिता हैं,

जिसके जलकरण पापराशी का विनाश करता है, ऐसी प्रचुर करुणामयी उस श्रीगङ्गादेवी की मैं वन्दना करता हूँ।

१५। ततः श्रीगुरुरूपां सखीं प्रणमेत् यथा—

राधासम्मुखसंसक्तां सखीसङ्गनिवासिनीम्।
तामहं सततं वन्दे परां गुरुरूपा-सखीम्॥

अनन्तर साधक श्रीगुरुरूपा सखी को प्रणाम करे जो श्रीराधिका के साम्मुख्य में परम आसक्त है, उन सखीसङ्ग निवासिनी परमचतुरा श्रीगुरुरूपा सखी को मैं सतत वन्दना करता हूँ।

१६। एवं क्रमेण यूथेश्वरीं प्रणम्य श्रीराधिकां प्रणमेत्—

श्रीगुरुरूपासखी और परमगुरुरूपासखी प्रभृति के क्रम से यूथेश्वरी को प्रणाम करके श्रीराधिका को प्रणाम करे।

रासोत्सवविलासिन्यै नमस्ते परमेश्वरि।
कृष्णप्राणाधिके राधे परमानन्दविग्रहे॥
प्रणमामि महानृत्यमयीं त्वामतिसुन्दरीम्।
रत्नालंकृतशोभाढ्यां कुसुमार्चितविग्रहाम्॥ इति॥

विज्ञप्ति;— भवतीमभिवाद्य चाटुभिर्वरमूर्ज्जेश्वरि! वर्य्यमर्थये।
भवदीयतया कृपां यथा,मयि कुर्य्यादधिकां वकान्तकः॥

हे रासोत्सवविलासिनि! हे परमेश्वरि! हे परमानन्दविग्रहे! हे कृष्ण-प्राणाधिके राधे! आपको प्रणाम करता हूँ। आप महानृत्यमयी. परमासुन्दरी और कुसुमार्चितविग्रहा एवं रत्नालङ्कारों से शोभिता है। हे कार्त्तिकाधिदेवि! मैं चाटुक्ति के द्वारा आपको अभिवादन करके इस श्रेष्ठबर की प्रार्थना करता हूँ— जिससे श्रीकृष्ण भवदीय रूप में मुझे जानकर अतिशय कृपा करेंगे।

१७। श्रीकृष्णस्य प्रणामः—

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥
नमो नलिननेत्राय वेणुवाद्यविनोदिने।
राधाधरसुधापान-शालिने वनमालिने॥ इति॥

विज्ञप्तिः— प्रणिपत्य भवन्तमर्थये, पशुपालेन्द्रकुमार काकुभिः।
व्रजयौवतमौलिमालिका-करुणापात्रमिमं जनं कुरु॥

श्रीकृष्ण का प्रणाम मन्त्र—हे ब्रह्मण्यदेव ! हे गो-ब्राह्मणहितकारी कृष्ण! हे जगन्मङ्गलकारी गोविन्द ! आपको सर्वदा नमस्कार करता हूँ। हे नलिन-नेत्र ! वेणुवाद्यविनोद ! हे वनमाली कृष्ण ! आप श्रीराधिका के अधरपान में आसक्त हैं, आपको नमस्कार है। हे गोपराजकुमार ! बहु काकुवाक्यों के साथ आपको प्रणाम करके प्रार्थना करता हूँ-आप कृपा करके मुझे व्रजयुवती-शिरोमणि श्रीराधिका का कृपापात्र करें।

१८। श्रीललितादीनां प्रणामः—

कारुण्यकल्पलतिके ललिते ! नमस्ते
राधासमानगुणचातुरिके विशाखे !।
त्वां नौमि चम्पकलतेऽच्युतचित्तचश्व-
रीके विचित्रचरिते च सुचित्ररेखे ॥
श्रीरङ्गदेवि ! दयित-प्रणयाङ्गरङ्गे
तुभ्यं नमोऽस्तु सुखलास्यसरित् सुदेवि !।
विद्याविनोदसदनेऽपि च तुङ्गविद्ये
पूर्णेन्दुखण्डनखरे सुमुखीन्दुलेखे ॥
राधानुजे मम नमोऽस्तु अनङ्गदेवि
तुभ्यं सदा मधुमति प्रियता-मरन्दे।
सौहार्द्यसख्यविमले विमले नमोऽस्तु
श्रीश्यामले परमसौहृदपात्रराधे ॥
हे पालिके प्रणयपालिनि ते नमोऽस्तु
श्रीमङ्गले ! परममङ्गलसीमरूपे।
धन्ये ! व्रजेन्द्रतनयप्रियतासुसम्प-
न्नोमिशचन्द्ररुचिरे ननु तारके त्वाम् ॥ इति ॥

विज्ञप्तिः—श्रीराधिका-प्रणयनिर्झरसिक्तचित्त-
वृत्तिप्रसून-परिमोदितमाधवास्ते।
प्रेमानुरागगुरवो ललितादयो मां
स्वांघ्र्यब्जरेणुसदृशीमपि भावयन्तु ॥ इति ॥

श्रीललितादि का प्रणाम मन्त्र— हे करुणाकल्पलतिके ललिते ! आपके

श्रीचरणों में नमस्कार। श्रीराधासमगुणचातुरिके हे विशाखे ! आपके चरणों में नमस्कार। कृष्णचित्त भ्रमरिके हे चम्पकलते ! आपके चरणों में प्रणाम। हे विचित्रचरिते सुचित्ररेखे ! आपके चरणों में प्रणाम। श्रीराधागोविन्दप्रणयाङ्ग-रङ्गे ! हे रङ्गदेवि ! आपके चरणों में नमस्कार। हे सुखलास्यसरित् सुदेवि आपके चरणों में नमस्कार। हे विद्याविनोदसदने तुङ्गविद्ये ! आपके श्रीचरणों में नमस्कार। पूर्णेन्दुखण्डनखरे हे सुमुखि इन्दुलेखे ! आपके चरणों में भी प्रणाम। हे राधानुजे अनङ्गदेवि ! आपको प्रणाम। हे प्रणयमकरन्दे मधुमति आपको नमस्कार। हे सौहृदसख्य-निर्मलाङ्गविमले ! आपको प्रणाम। श्रीराधिका की परमसौहृदपात्री हे श्यामले ! आपको भी प्रणाम। परममङ्गल-सीमारूपे हे मङ्गले ! आपको नमस्कार। कृष्णप्रेमयुक्ते हे धन्ये ! आपको प्रणाम। हे कृष्णचन्द्ररुचिरे तारके ! आपको भी प्रणाम करता हूँ।

जिन सबकी चित्तवृत्तिरूपा लता राधाप्रेमनिर्झर से सिक्त होकर स्वप्रेम-कुसुमराजि के आमोद से श्रीमाधव को प्रमोदित करती रहती हैं, जोसब प्रेम और अनुराग के गृह स्वरूप है, राधाप्रिय ललितादि परिकरगण मुझे स्वीय पदाब्जरेणु सदृश चिन्ता करें।

१९। श्रीकृष्णकिङ्करादीनां प्रणामः—

रक्तकः पत्रकः पत्री मधुकण्ठो मधुव्रतः।
रसालः सुविलासश्च प्रेमकन्दो मरन्दकः॥
आनन्दश्चन्द्रहासश्च पयोदो वकुलस्तथा।
रसदः शारदाद्याश्च व्रजस्था अनुगा मताः॥

मणिमयवरमण्डनोज्ज्वलाङ्गान्,पुरटजवामधुलिट्पटीराभासः।
निजवपुरनुरूपदिव्यवस्त्रान्,व्रजपतितनयकिङ्करान् नमामि॥

श्रीकृष्णकिङ्करादिका प्रणाम—रक्तक, पत्रक, पत्री, मधुकण्ठ, मधुव्रत, रसाल, सुविलास, प्रेमकन्द, मरन्दक, चन्द्रहास, पयोद, वकुल, रसद और शारदादिये सभी व्रजस्थ अनुग अर्थात् श्रीकृष्ण के दास हैं। इनके अङ्ग स्वर्णजवा भ्रमर, और चन्दनवर्ण सदृश एवं मणिमयमण्डन से समुज्ज्वलित हैं। ये सभी निज गात्रवर्णानुरूप दिव्यवस्त्र परिधान करते हैं। मैं इन सभी को प्रणाम करता हूँ।

२०। तद्वयस्यानाम् प्रणामः—

क्षणादर्शनतो दीनाः सदा सहविहारिणः।
तदेकजीविताः प्रोक्ता वयस्या व्रजवासिनः॥

बलानुजसदृग्वयोगुणविलासवेषश्रियः
प्रियङ्करणवल्लकीदलविषाण-वेण्वङ्किताः ।
महेन्द्रमणिहाटकस्फटिकपद्मरागत्विषः
सदा प्रणयशालिनः सहचरा हरेःपान्तु नः ॥

श्रीकृष्ण के सखागण का प्रणाम— श्रीकृष्ण के साथ सर्वदा विहारकारी, तदेकजीवन, एकक्षण अदर्शन में दीन एवम्भूत व्रजवासी सखागण शास्त्र में कहे गये हैं। जोसव श्रीकृष्णतुल्य वयोगुण, विलास और वेष से सुशोभित तथा प्रियकारक वीणा, पत्रवाद्य, विषाण और वेणुयन्त्र से चिह्नित एवं इन्द्र नीलमणि स्वर्ण, स्फटिक और पद्मरागमणि सदृश कान्ति विशिष्ट हैं, वे सब हमारी रक्षा करे।

२१। श्रीबलदेवस्य प्रणामः—

गण्डान्तःस्फुरदेककुण्डलमलिच्छन्नावतंसोत्पलं
कस्तुरीकृतचित्रकं पृथुहृदि भ्राजिष्णुगुञ्जास्रजम् ।
तं वीरं शरदम्बुदद्युतिभरं सम्वीतनीलाम्वरं
गम्भीरस्वनितं प्रलम्बभुजमालम्बे प्रलम्बद्विषम् ॥

श्रीबलदेव का प्रणाम—जिनके वामगण्डप्रान्त पर कर्णाभरण स्वरूप एक कुण्डल और भ्रमर वेष्ठित एक उत्पल शोभा पा रहा है, पृथुल वक्षस्थल पर कस्तुरीचित्र और उज्ज्वल गुञ्जाहार विद्यमान है, श्रीअङ्ग शरद् मेघ की भाँति शुक्लद्युत्ति और नीलाम्वरावृत एवं प्रलम्बवाहु युक्त है, उन प्रलम्बद्वेष्टा श्रीवलदेव चन्द्र का आश्रय ग्रहण करता हूँ।

२२ श्रीयशोदायाः प्रणामः—(भाः १०।८)

क्षौमं वासः पृथुकटितटे विभ्रती सूत्रनद्धं
पुत्रस्नेहस्नुतकुचयुगं जातकम्पञ्च सुभ्रूः ।
रज्ज्वाकर्षश्रमभुजचलत्कङ्कणौ कुण्डले च
स्विन्नं वक्त्रं कवरविगलन्मालती निर्ममन्थ ॥
डोरीजुटितवक्रकेशपटला सिन्दुरविन्दूल्लसत्—
सीमन्तद्युतिरङ्गभूषणविधिं नातिप्रभूतं श्रिता ।
गोविन्दास्य-निसृष्टसाश्रुनयनद्वन्द्वा नवेन्दीवर—
श्याम-श्यामरुचिर्विचित्रसिचया गोष्ठेश्वरी पातु वः ॥

श्रीयशोदा का प्रणाम— जो दधि मन्थन के समय विशाल कटितट पर क्षौम वसन काञ्चीद्वारा निवद्ध करते हैं, पुत्रस्नेह से जिनके स्तनद्वय से दुग्ध-धारा क्षरित हो रही है। वारम्वार दधिमन्थन रज्जु के आकर्षण से जिनके श्रान्त वाहुद्वय पर स्थित कङ्कणों की गति, कर्णों पर स्थित कुण्डलयुगल का कम्पन, मुखपर स्वेदविन्दु एवं कबरीस्थित मालती से पुष्पराजि का स्खलन हो रहा है। जिनके वक्रकेशकलाप डोरीयुक्त होकर सुशोभित हैं। सीमन्तरेखा सिन्दूर विन्दु से समुज्ज्वलित है' अङ्ग की भूषणसज्जा सीमित है, गोविन्द के वदन दर्शन से जिनके नेत्रों से अश्रु क्षरित होता है, नवेन्दीवर के सदृश श्याम-वर्णा और विचित्रवसनधारिणी वे श्रीयशोदा हम सवको रक्षा करें।

२३। श्रीव्रजाधीशस्य प्रणामः—

तिलतण्डुलितैः कचैः स्फुरन्तं नवभाण्डीरपलाशचारुचेलम्।
अतितुन्दिलमिन्दुकान्तिभाजं व्रजराजं वरकूर्च्चमर्च्चयामि॥

श्रीनन्दमहाराज का प्रणाम— जिनके केश मिश्रिततिलतण्डुलसदृश, वसन नवभाण्डीर पत्र के सदृश मनोरम, श्रीअङ्ग चन्द्रज्योत्स्नासदृश कान्तिसम्पन्न और उदर अति स्थुल है' उन उत्तम श्मश्रुधारी व्रजराज की अर्चना करता हूँ।

२४। श्रीरोहिणीदेव्याः प्रणामः (श्रीव्रजविलासे ११)—

पुत्रादुच्चैरपि हलधरात् सिञ्चति स्नेहपूरै-
र्गोविन्दं याद्भुतरसवती प्रक्रियासु प्रवीणा।
सख्यश्रिभिर्व्रजपुर-महाराजराज्ञीं नयैस्तद्-
गोपेन्द्रं या सुखयति भजे रोहिणीमीश्वरीं ताम्॥

श्रीव्रजविलासस्तव में श्रीरोहिणीदेवी का प्रणाम— जो निज पुत्र हलधर अपेक्षा अधिक स्नेहरस से श्रीगोविन्द को सेवा करती हैं, जो आश्चर्य पाकक्रिया में सुनिपुणा है, सख्यभावसम्पद् से जो व्रजपुर की महाराज्ञी श्रीयशोदा को सुख प्रदान करती हैं, उन ईश्वरी रोहिणी का मैं भजन करता हूँ।

२५। श्रीवृषभानोः (श्रीव्रजविलासे २६)—

खर्व्वश्मश्रुमुदारमुज्ज्वलकुलं गौरं समानं स्फुरत्-
पञ्चाशत्तमवर्षवन्दितवयःक्रान्ति प्रवीणं व्रजे।
गोष्ठेशस्य सखायमुन्नततरश्रीदामतोऽपि प्रिय-
श्रीराधां वृषभानुमुद्भटयशोव्रातं सदा तं भजे॥

श्रीवृषभानु का प्रणाम— जो खर्व्वश्मश्रुयुक्त, परम उदार, उज्ज्वल कुल में उत्पन्न, गौरवर्ण, व्रज में आदरणीय, बहुदर्शी, पञ्चाशत् वर्ष वयोयुक्त, उन्नत कीर्त्तिशाली, और गोष्ठाधीश नन्द के सखा हैं। जो श्रेष्ठ पुत्र श्रीदाम अपेक्षा कन्या श्रीराधा को अतिशय प्रीति करते हैं, उन श्रीवृषभानु महाराज को मैं निरन्तर भजन करता हूँ।

२६। श्रीकीर्त्तिदायाः प्रणामः (व्रजविलासे २७)

अनुदिनमिह मात्रा राधिकाभव्यवार्त्ताः
कलयितुमतियत्नात् प्रेष्यते धात्रिकायाः।
दुहितृयुगलमुच्चैः प्रेमपूरप्रपञ्चै-
र्विकलमति ययाऽसौ कीर्त्तिदा साऽवतान्नः॥

श्रीकीर्त्तिदा का प्रणाम- जो कन्या श्रीराधा की दैनिक मङ्गलवार्त्ता जानने के हेतु अतियत्नपूर्व्वक धात्री कन्यायुगल को प्रेषित करती हैं। जो श्रीराधिका-विषयक उन्नत वात्सल्यप्रेम में सर्वदा विकलमति है, वे कीर्त्तिदा हमारी रक्षा करें

२७। श्रीरूपमञ्जर्य्यादीनां प्रणामः—

ताम्बूलार्पण-पादमर्द्दन-पयोदानाभिसारादिभि
र्वृन्दारण्यमहेश्वरीं प्रियतया यास्तोषयन्ति प्रियाः।
प्राणप्रेष्ठ-सखीकुलादपि किलासङ्कोचिता भूमिकाः
केलिभूमिषु रूपमञ्जरीमुखास्ता दासिका- संश्रये॥

श्रीरूपमञ्जरी का प्रणाम— प्रियतावशतः ताम्बूलार्पण, पादमर्दन, जलदान और अभिसारादि सेवा द्वारा जो वृन्दावनेश्वरी श्रीराधिका को सन्तुष्ट करती हैं, प्राणप्रेष्ठ सखीगण की अपेक्षा केलिभूमि से असङ्कोचित भूमिकास्वरूप उन रूपमञ्जरी प्रमुख श्रीराधिका की प्रियदासीवर्ग का सम्यक् आश्रय ग्रहण करता हूँ

विज्ञप्ति- —श्रीराधाप्राणतुल्या मधुररसकथाचातुरीचित्रदक्षा-
सेवासन्तर्पितेशाः स्वसुरतविमुखा राधिकानन्दचेष्टा.।
सर्व्वाः सर्व्वार्थसिद्धा निजगुणकरुणापूर्णमाध्वीकसारा
नर्म्मालयो राधिकाया मयि कुरुत कृपां प्रेमसेवोत्तरा याः॥

जो सब श्रीराधिका की प्राणतुल्य और मधुर रसकथा की विचित्र चातुरी में निपुण एवं स्वसुरत सुख से विमुख हैं, जो सब सेवा द्वारा श्रीराधिका की तुष्टि विधान करती हैं। इसके कारण श्रीराधा को आनन्द देना ही उन सब

की चेष्टा है। ये सभी निजगुण व कृपारूप माध्वीकसार से पूर्ण, सर्वार्थ सिद्धा और प्रेमसेवा विसयक असाधारण सेविका हैं, वे सव श्रीराधा की प्रियनर्म सखीगण हमारी रक्षा करें।

२८। सर्व्वाः प्रति विज्ञप्तिः—

हे प्रेमसम्पदतुला व्रजनव्ययूनोः
प्राणाधिकाः प्रियसखी-प्रियनर्म्मसख्यः।
युष्माकमेव चरणाब्जरजोऽभिषेकं
साक्षादवाप्य सफलोऽस्तु ममैव मूर्द्धा॥

अर्थात् सभी के प्रति विज्ञप्ति— हे राधिका की प्रियसखी और प्रियनर्म-सखीगण! आप सभी युगलकिशोर की अतुल्य प्रेमसम्पत्स्वरूप और तत्-प्राणाधिका हैं; आप सबके साक्षात् पदरज अभिषेक को प्राप्त करके मेरा मस्तक सफल हो॥

२९। श्रीपौर्णमास्याः प्रणामः—

श्रीपौर्णमास्याश्चरणारविन्दं वन्दे सदा भक्तिवितानहेतुम्।
श्रीकृष्णलीलाब्धितरङ्गमग्नं यस्याः मनः सर्व्वनिषेवितायाः॥

श्रीपौर्णमासी का प्रणाम—जिसका मन श्रीकृष्णलीला समुद्र में निमग्न है, जो सर्वव्रजजनकर्त्तृक सेविता है, भक्तिविस्तार के कारणस्वरूप उन पौर्णमासी देवी के श्रीचरणारविन्द की सर्वदा वन्दना करता हूँ।

३०। श्रीवृन्दायाः प्रणामः—

तवारण्ये देवि ध्रुवमिह मुरारिर्विहरते
सदा प्रेयस्येति श्रुतिरपि विरौति स्मृतिरपि।
इति ज्ञात्वा वृन्दे चरणमभिवन्दे तव कृपां
कुरुष्व क्षिप्रं मे फलतु नितरां तर्षविटपी॥

श्रीवृन्दादेवी का प्रणाम-हे देवि! आपकी अरण्य में प्रेयसी श्रीराधा के साथ मुरारि सर्वदा विहार करते हैं, यह श्रुति स्मृति कहती हैं। हे वृन्दे! यह जानकर आपके चरणकमल की वन्दना करता हूँ-आप कृपा करें कि मेरी आशातरु शीघ्र ही अतिशय फलधारण करे।

३१। श्रीतुलस्याः प्रणामः—

या दृष्टा निखिलाघसङ्घशमनीस्पृष्टा वपुःपावनी

रोगानामभिवन्दिता निरसनी सिक्तान्तकत्रासिनी ।
प्रत्यासत्तिविधयिनी भगवतः कृष्णस्य संरोपिता
न्यस्ता तच्चरणे विमुक्तिफलदा तस्यै तुलस्यै नमः ॥

श्रीतुलसी का प्रणाम— जिनके दर्शन से निखिल पाप नष्ट होते हैं, स्पर्श से शरीर पवित्र होता है, अभिवन्दन से रोगसमूहका नाश होता है, और सिञ्चन से यम को भय होता है, एवं रोपण से भगवान्‌श्रीकृष्ण का सान्निध्य लाभ होता है, जो श्रीकृष्ण चरण में समर्पित होकर परम फल दान करती हैं, उन तुलसी देवी को नमस्कार करता हूँ ।

३२। श्रीवृन्दावनस्य प्रणामः—

आनन्दवृन्दपरितुन्दिलमिन्दिराया
आनन्दवृन्दपरिनन्दितनन्दपुत्रम् ।
गोविन्दसुन्दरवधूपरिनन्दितं तद्
वृन्दावनं मधुरमूर्त्तमहं नमामि ॥ इति ॥

श्रीवृन्दाबन का प्रणाम — जो श्रीलक्ष्मी के आनन्दसमूह को परिपुष्ट करता है एवं स्वानन्दवृन्द द्वारा श्रीनन्दनन्दन को भी परिनन्दित करता है, जिसके दर्शन से श्रीगोविन्द की सुन्दरी वधूगण भी परानन्द प्राप्त करती हैं, उसी मधुर मूर्त्ति वृन्दावन को प्रणाम करता हूँ।

३३। श्रीयमुनायाः प्रणामः—

गङ्गादितीर्थपरिसेवितपादपद्मां
गोलकसख्यरसपूरमहिं महिम्ना ।
आप्लाविताखिलसुसाधुजनां सुखाब्धौ
राधामुकुन्दमुदितां यमुनां नमामि ॥

श्रीयमुना का प्रणाम— गङ्गादि तीर्थ जिनके पादपद्मों की सेवा करते हैं, जो महिमा से गोलकीय सख्यरसप्रवाह स्वरूपा हैं, और अखिल साधुजनों को सुखसमुद्र में आप्लावित करती हैं, श्रीराधामुकुन्द की आनन्ददात्री उस यमुना को प्रणाम करता हूँ।

३४। श्रीगोवर्द्धनस्य प्रणामः—

सप्ताहमेवाच्युतहस्तपद्मके, भृङ्गायमानं फलमूलकन्दरैः ।
संसेव्यमानं हरिमात्मवृन्दकं गोवर्द्धनं तं शिरसा नमामि ॥

श्रीगोवर्द्धन का प्रणाम— जिसने सप्ताहकाल पर्यन्त अच्युत के हस्तपद्म पर भृङ्ग के सदृश अवस्थान किया, जो फलमूल और गुहा के द्वारा सपरिकर श्रीहरि की सेवा करता है, उन श्रीगोवर्द्धन को शिर से नमस्कार करता हूँ ।

३५ । श्रीश्यामकुण्डस्य प्रणामः—

दुष्टारिष्टवधे स्वयं समुदभूत् कृष्णाङ्घ्रिपद्मादिदं
स्फीतं यन्मकरन्दविस्तृतिरिवारिष्टाख्यमिष्टं सरः ।
सोपानैः परिरञ्जितं प्रियतया श्रीराधया कारितैः
प्रेम्णालिङ्गदिव प्रियासर इदं तन्नित्यनित्यं भजे ।।

श्रीश्यामकुण्ड का प्रणाम— दुष्ट अरिष्टासुर वधोपरान्त श्रीकृष्ण के पादपद्मों से उत्पन्न मकरन्द विस्तार की भाँति स्फीत अरिष्टाख्य सरोवर स्वयं प्रकटित हुआ, यह सरोवर सभी का इष्ट है । प्रियताहेतु श्रीराधाने जिसके मणिमय सोपानसमूह करायी थी, तद्द्वारा उक्त सरोवर परिरञ्जित हुआ है, जो श्रीराधा के सरोवर से प्रेमालिङ्गन करके विराजित है, उसी सरोवर (श्यामकुण्ड) को मैं नित्यप्रति भजन करता हूँ ।

३६ । श्रीराधाकुण्डस्य प्रणाम.—

श्रीवृन्दाविपिनं सुरम्यमपि तच्छ्रीमान् स गोवर्द्धनः
सा रासस्थलिकाप्यलं रसमयैः किं तावदन्यस्थलैः ।
यस्याप्यंशलवेन नार्हति मनाक् साम्यं मुकुन्दस्य तत्
प्राणेभ्योऽप्यधिकं प्रियेव दयितं तत्कुण्डमेवाश्रये ।। इति

श्रीराधाकुण्ड का प्रणाम— श्रीवृन्दावन सुरम्य होने पर भी और वह प्रसिद्ध गोवर्द्धन शोभासम्पन्न पूर्ण होने पर भी एवं अतिशय रसमयरूप ये श्रीरासस्थली विराजमान होने पर भी अन्य स्थल की बातही क्या ? ये सभी श्रीराधाकुण्ड की अंशमात्र के समान भी नही है । जो मुकुन्द की प्रिया स्वरूप तत्प्राणापेक्षा अधिक प्रिय है, उस श्रीराधाकुण्ड का आश्रय ग्रहण करता हूँ ।

३७ । श्रीव्रजवासिनां प्रणामः—

मुदा यत्र ब्रह्मा तृणनिकरगुल्मादिषु परं
सदा काङ्क्षन् जन्मार्पितविविधकर्म्माण्यनुदिनम् ।
क्रमाद् ये तत्रैव व्रजभुवि वसन्ति प्रियजना
मया ते ते वन्द्याः परमविनयाः पुण्यखचिताः ।। इति ।।

श्रीव्रजवासीगण का प्रणाम— ब्रह्मा श्रीभगवान् को सर्वदा विविध कर्मार्पण करके जिस व्रज में तृण निकर और गुल्मादि के बीच में जन्मलाभ करने के हेतु निरन्तर आकांक्षा करते हैं, एवं इस जन्मको श्रेष्ठ जन्म मानते हैं, उसी व्रजभूमि पर श्रीभगवान् के ये सब प्रियजन क्रमानुपूर्वक वास करते हैं, ये परम विनीत और पुण्यखचित है, अर्थात् भक्तिरसमय कलेवर है, मैं उन सब व्रजवासीयों को वन्दन करता हूँ।

३८। श्रीवैष्णवानां प्रणामः—

चैतन्यचन्द्रचरितामृत-शुद्धसिन्धु-
वृन्दावनीयसुरसोर्म्मि-समुन्निमग्नाः।
ये वै जगन्निजगुणैः स्वयमापुनन्ति,
तान् वैष्णवांश्च हरिनामपरान्नमामि ॥
वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥

श्रीवैष्णवगण का प्रणाम— जो श्रीचैतन्यचरितामृतरूप शुद्ध सागर के वृन्दावनीय रसरूप तरङ्ग से परमानन्द में निमग्न हैं, निजगुणों से भी वे स्वयं जगन्निस्तारकारी हैं, ऐसे उन हरिनामपरायण वैष्णवों को प्रणाम करता हूँ। वाञ्छाकल्पतरु, करुणासागर और पतितपावन वैष्णवों को नमस्कार है।

"एवं गुर्व्वादिक्रमेण प्रणाम-विज्ञप्तिपाठस्त्रिसन्ध्यं कर्त्तव्यम्"
इस प्रकार गुर्वादिक्रम से प्रणाम और विज्ञप्ति पाठ साधक तीनों सन्ध्या में करें

३९। अथ प्रातःस्मरणकीर्त्तने—

स जयति विशुद्धविक्रमः कनकाभः कमलायतेक्षणः।
वरजानु-विलम्बि-सद्भुजो वहुधाभक्तिरसाभिनर्त्तकः ॥

प्रणामादि के अनन्तर प्रातःस्मरण और कीर्तन कर्त्तव्य यथा— जो विशुद्ध विक्रम, कनक कान्तियुक्त, कमलायतेक्षण, जानुपर्यन्त जिनके सद्भुज विलम्बित हैं, जो नाना भक्तिरसाभिनर्त्तक हैं, उन गौरचन्द्र की जय हो।

जयति जननिवासो देवकीजन्मवादो
यदुवरपरिषत् स्वैर्द्दोर्भिरस्यन्नधर्म्मम्।
स्थिरचरवृजिनघ्नः सुस्मितश्रीमुखेन
व्रजपुरवनितानां बर्द्धयन् कामदेवम् ॥(भा. १०।९०)

जो सभी जीवों में अन्तर्यामीरूप से निवास करते हैं, श्रीदेवकी से जिनका

जन्म वादमात्र है, यदुगण जिनके नित्यसेवक है, जो स्वीय वाहुद्वारा अधर्मका नाश करते हैं, जो स्थावर और जङ्गम के संसार दुःखहर्त्ता है, जो मधुर हास्य-समन्वित मुखकमल के द्वारा व्रजवनिता और पुरवनितागण का कामवर्द्धन करते हैं, उन श्रीकृष्णचन्द्र की जय हो।

स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते
पुरुषं तमजंनित्यं व्रजामि शरणं हरिम्।
विदग्धगोपालविलासिनीनां,सम्भोगचिह्नाङ्कितसर्व्वगात्रम्।
पवित्रमाम्नायगिरामगम्यं,ब्रह्म प्रपद्ये नवनीतचौरम् ॥

अर्थ—जिनके स्मरण से साधक सकल कल्याणों का पात्र हो जाता है, उन अजपुरुष श्री हरि की मैं नित्य शरणागत हूँ। जिनका सर्वाङ्ग विदग्ध गोपीगण के सम्भोग चिन्हों से अङ्कित है, जो वेदवाक्यों के अगोचर है, जो नवनीतचोर होने पर भी पवित्र है, उन ब्रह्म (श्रीकृष्ण) की मैं शरणागत हूँ।

उद्गायतीनामरविन्दलोचनं व्रजाङ्गनानां दिवमस्पृशद्ध्वनिः।
दध्नश्च निर्मन्थनशब्दमिश्रितो निरस्यते येन दिशाममङ्गलम् ॥

अर्थ—व्रजाङ्गनागण प्रभात में कमललोचन श्रीकृष्ण को उद्देश्य करके उच्चस्वर से गान करती हैं। उस समय उनकी वह गीतध्वनि दधिमन्थन शब्द के साथ मिश्रित होकर आकाश को स्पर्श करती है, यह ध्वनि जगत् समूह का अमङ्गल नाश करती रहती है।

४०-४१। अथ तत्र कालनियमः, यथा-श्रीलध्यानचन्द्रगोस्वामिपादैर्विरचितपद्धत्याम्—तत्र निशान्ते ध्यानम्, (शारदातिलके)—

स्मरेद्वृन्दावने रम्ये मोहयन्तमनारतम्।
गोविन्दं पुण्डरीकाक्षं गोपकन्यासहस्रशः ॥
आत्मनो वदनाम्भोजे प्रेरिताक्षिमधुव्रताः।
कामवाणेन विवशाश्चिरमाश्लेषणोत्सुकाः ॥
मुक्ताहारलसत्पीनतुङ्गस्तनभरानताः।
स्रस्तधम्मिल्लवसना मदस्खलितभाषणाः ॥
दन्तपंक्तिप्रभोद्भासिस्पन्दमानाधराश्चिताः।
विलोभयन्तीर्विविधैर्विभ्रमैर्भावगर्भितैः ॥ इति ॥

स्मरण का काल नियम— निशान्त, प्रातः, पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न,

सन्ध्या, प्रदोष और रात्रि ये अष्टकाल है। मध्याह्न और रात्रिकाल का परिमाण १२ दण्ड करके २४ दण्ड है, निशान्तादि षष्ट काल छः दण्ड करके ३६ दण्ड जानना होगा। निशान्ते ध्यानं यथा— साधक निशान्त में रमणीय वृन्दावन में पुण्डरीकाक्ष श्रीगोविन्द का स्मरण करे,— जो सहस्र सहस्र गोपकन्याओं को अनुक्षण नेत्र कटाक्ष से मोहित करके वश में कर लेते हैं। कामवाण से विवश और आलिङ्गन के लिए उत्कण्ठित गोपकन्या श्रीकृष्ण मुखकमल के प्रति नेत्ररूपी मधुकर को प्रेरित करती रहती है। जो मुक्ताहारों से शोभित स्थूल और उच्च स्तनभार से नत है, जिनका धम्मिल्ल वसन और मदयुक्त वाक्य स्खलित है, एवं दन्तश्रेणी की कान्ति से स्पन्दमान अधर रञ्जित हैं, जो विभ्रमादि विविध भावगर्वित चेष्टाओं से श्रीगोविन्द को प्रलोभित करती रहती हैं।

४२। अथ निशान्तलीलां स्मरेत्। तत्रादौ गौरचन्द्रस्य—

(भावनासारसंग्रहे)—

प्रगे श्रीवासस्य द्विजकुलरवैर्निष्कुटवरे
श्रुतिध्वानप्रख्यैः सपदि गतनिद्रं पुलकितम्।
हरेः पार्श्वे राधास्थितिमनुभवन्तं नयनजै-
र्जलैः संसिक्ताङ्गं वरकनकगौरं भज मनः॥ इति॥

अर्थ—निशांत में श्रीवास के श्रेष्ठ गृहाराम में पक्षीगण के वेदध्वनितुल्य कलरव से श्रीगौराङ्ग की निद्रा गत होने पर वे निकुञ्ज के मध्य श्रीकृष्ण पार्श्व में श्रीराधिका की स्थिति को अनुभव करते-करते रोमाञ्चित कलेवर को नयनजल से सेचन करते हैं। इस प्रकार श्रेष्ठ कनकवर्ण श्रीगौराङ्ग को हे मन! भजनकर।

स्मरणमङ्गले—रात्र्यन्ते त्रस्तवृन्देरितबहुभिरवैर्बोधितौकीरशारी-
पद्यैर्हृद्यैरहृद्यैरपि सुखशयनादुत्थितौ तौ सखीभिः।
दृष्टौ हृष्टौ तदात्वोदितरतिललितौ कक्खटीगीः सशङ्कौ
राधाकृष्णौ सतृष्णावपि निजनिजधाम्न्याप्ततल्पौ स्मरामि॥

अर्थ—दिवसागमशङ्किता वृन्दा श्रीराधाकृष्ण की निद्राभङ्गार्थ पक्षियों को प्रेरित करती हैं, उनके कलरव से एवं शुक-सारिका कर्त्तृक पठित प्रिय और-अप्रिय पद्य से सखियों के साथ श्रीराधाकृष्ण प्रबोधित होते हैं। तत्कालोदित उभय के अङ्गों में रतिमनोहरता सखीगण कर्त्तृक दृष्ट होनेपर दोनों ही आनन्द लाभ करते हैं। दोनों की पुनः विलासारम्भ में तृष्णा होने परभी कक्खटी-नामक वानरी के चित्कार से शङ्कित होकर निज-निज गृह में आकर शयन करते हैं, एवम्भूत श्रीराधागोविन्द का स्मरण करता हूँ।

४३। सनत्कुमारसंहितायाश्च—

अर्थात् सनत्कुमार संहिता में भी इस प्रकार निशांत लीला वर्णित है।

४४। ततो हरिनाम-महामन्त्रं यथाशक्ति जपेत्।

अर्थ—निशान्तलीला स्मरणानन्तर साधक शक्ति अनुसार श्रीहरिनाम महामन्त्र का जप करे।

ततः पुनश्च गुर्व्वादीन् प्रणमेत् यथा—

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च
श्रीरूपं साग्रजातं सहगणरघुनाथान्वितं तं सजीवम्।
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्यदेवं
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगणललिता-श्रीविशाखान्वितांश्च॥

अर्थ—मैं श्रीगुरुदेव के चरणकमल, परमगुरु, परात्परगुरु प्रभृति और शिक्षागुरुगण एवं वैष्णववृन्द की वन्दना करता हूँ। अग्रज श्रीसनातन, जीव- और रघुनाथादिगण सह श्रीरूपगोस्वामी की वन्दना करता हूँ। श्रीनित्यानन्द अद्वैत और परिजनसहित श्रीकृष्णचैतन्यदेव की वन्दना करता हूँ, एवं ललिता विशाखादि सह श्रीराधाकृष्ण के श्रीचरणों की वन्दना करता हूँ।

ततो मैत्रादिविधिं कुर्यात्, ततो वैष्णवाचमनम्।

तदनन्तर साधक शौचादि कृत्य को यथाविधि-यथाक्रम से करके वैष्णव-आचमन करे। यथा—आदौ पादौ हस्तौच प्रक्षालयेत्, प्रथम हस्त-पद प्रक्षालन करे, ततः केशवाय नमः, श्री नारायणाय नमः, श्रीमाधवाय नमः, इति मन्त्र-त्रयं जपन् मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठसंहताङ्गुलिना दक्षिणकरेण वारत्रयं जलमाचमेत्, अर्थ—इनतीनो मन्त्रों का जपकरके; अङ्गुष्ठ को मुक्त कर कनिष्ठ सह अन्यान्य अङ्गुलियों को मिलाकर, दक्षिण कर से तीनवार जल आचमन करे। ततः "श्रीगोविन्दाय नमः, श्रीविष्णवे नमः" इति मन्त्रद्वयं जपन् (इन दो मन्त्रों का जप करके) पाणिद्वयं प्रक्षालयेत्(हस्तद्वय का प्रक्षालन करे)। "श्रीमधुसूदनाय नमः" "श्रीत्रिविक्रमाय नमः" इतिमन्त्रद्वयं जपन् (इन दो मन्त्रों का जपकरके) संवृताङ्गुष्ठमूलेन मुखं वामदक्षिण क्रमाभ्यां वारद्वयं मार्जयेत्। (संवृत अङ्गुष्ठ मूलद्वारा वाम-दक्षिण क्रम से दो वार मुख मार्जन करे), "श्रीवामनाय नमः" "श्री श्रीधराय नमः" इति मन्त्रद्वयं जपन् (इन मन्त्रद्वय का जप करके) तथा-संवृताङ्गुष्ठमूलेन ओष्ठोधरौ ऊर्द्धाधः क्रमेण वारद्वयं मार्जयेत्, (उसी प्रकार अङ्गुष्ठमूल से ओष्ठ एवं अधर को ऊर्द्ध और अधः क्रम से दोवार मार्ज्जन करे) "श्रीहृषीकेशाय नमः" इत्येकं मन्त्रं जपन् (इस एक मन्त्र का जप करके) पाद-द्वयं प्रक्षालयेत् (पादद्वय प्रक्षालन करे)। "श्रीपद्मनाभाय नमः" इत्येकं मन्त्रं

जपन् (इस एक मन्त्रजप करके)पुनः पादद्वयं प्रक्षालयेत् (पुनः पादद्वय प्रक्षालन करे "श्रीदामोदराय नमः" इत्येकं मन्त्रं जपन् (इस एक मन्त्रजप करके मूर्द्धि जलं त्रिवारमभिसिञ्चेत् (मस्तक में तीनवार जल सेचन करे। "श्रीवासुदेवाय नमः" इत्येकं मन्त्रं जपन् (इस एक मन्त्र जप करके) संहतानामिकामध्यमा तर्ज्जनीभिर्मुखमुपस्पृशेत् (अनामिका, मध्यमा तथा तर्ज्जनी इन अङ्गुलि त्रय एकत्र कर मुखस्पर्श करे)। "श्रीसङ्कर्षणाय नमः" "प्रद्युम्नाय नमः" इतिमन्त्र द्वयं जपन् (इस दो मन्त्र जप करके) अङ्गुष्ठ तर्ज्जनीभ्यां नासिके स्पृशेत् (अंगुष्ठ एवं तर्ज्जनी के द्वारा नासापुटद्वय स्पर्श करे)। "श्रीअनिरुद्धाय नमः" "श्रीपुरुषोत्तमाय नमः" इति मन्त्रं जपन् (इस दो मन्त्र जपकरके) संयतांगुष्ठा-नामिकाभ्यां नेत्रयुगलं पुनः पुनः स्पृशेत्, (अंगुष्ठ तथा अनामिका द्वारा नेत्रयुगल को पुनः-पुनः स्पर्श करे। 'श्रीअधोक्षजाय नमः, श्रीनृसिंहाय नमः, इतिमन्त्रद्वयंजपन्(इन दो मन्त्रों का जप करके) संयताङ्गुष्ठानामिकाभ्यां नाभिं स्पृशेत्, अङ्गुष्ठ और अनामिका को संयत करके नाभि को स्पर्श करे। 'श्रीजनार्दनाय नमः' इति मन्त्रं जपन्, (इस मन्त्र का जप करे) करतलेन हृदयं स्पृशेत्,(करतल से हृदय स्पर्श करे)। 'श्रीउपेन्द्राय नमः' बोलकर सर्वाङ्गुलिभि-र्मस्तकं स्पृशेत् (सर्वाङ्गुलियों से मस्तक स्पर्श करे)। 'श्रीहरये नमः, श्रीकृष्णाय नमः' इति मन्त्रद्वयं जपन् (इन दो मन्त्रों का जप करके) कराग्रेण दक्षिणवाम-वाहुमूले स्पृशेत्, (हस्तके अग्रभाग से दक्षिण और वाम वाहु के मूल को स्पर्श करे)।

अशक्तः केवलं दक्षं स्पृशेत् कर्णं तथा च वाक् ।

कुर्व्वितालभनं वापि दक्षिणश्रवणस्य वै ॥

(हः भः विः ३।१०८) इति ।

४५ । ततो स्नानार्थं गङ्गादौ गत्वा धौतवस्त्रं मृत्तिकाञ्च तटे न्यस्य तीर्थं प्रणम्य श्रीकृष्णञ्च प्रणम्य तं प्रार्थयेत्—

रोगादि द्वारा अक्षम होने पर केवलमात्र दक्षिण कर्ण स्पर्श करे। इस विषय में वचन भी है- किम्वा असमर्थ व्यक्ति केवलमात्र दक्षिण कर्ण को स्पर्श करे। कोई कोई कहते हैं— तीन बार आचमन में असमर्थ व्यक्ति केवल दक्षिण कर्ण को स्पर्श करे (टीका)।

अर्थ- अनन्तर स्नानार्थ श्रीगङ्गादि नदी पर जाकर धौतवस्त्र और मृत्तिका को तट पर रखकर तीर्थ एवं श्रीकृष्ण को प्रणाम करके श्रीकृष्णचरण में प्रार्थना करे। प्रार्थना यथा पाद्मे—

पाद्मे— देवदेव जगन्नाथ शङ्खचक्रगदाधर ।

देहि विष्णो ममानुज्ञां तव तीर्थनिषेवणे ॥

पापोऽहं पापकर्म्माहं पापात्मा पापसम्भवः ।

त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष ! सर्व्वपापहरो हरिः ।। इति ।।

हे देवदेव ! जगन्नाथ हे शङ्खचक्रगदाधर ! हे विष्णो ! आपके तीर्थ सेवन के लिए आप मुझे आज्ञा प्रदान करें । मैं पापी, पापकर्म्मा, पापात्मा और पाप से उत्पन्न हुआ हूँ, आप सर्व्वपापहरणकारी हैं, हे श्रीहरि ! हे पुण्डरीकाक्ष ! मेरा निस्तार करो ।

ततो जले प्रविश्य मृत्तिकां गृह्णीयात् । तन्मन्त्रो यथा पाद्मे—

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ।

मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम् ।।

उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना ।

नमस्ते सर्व्वभूतानां प्रभवावनि सुव्रते ।। इति ।।

अर्थ—हे वसुन्धरे ! आप अश्व, रथ और विष्णु कर्त्तृक आक्रान्ता, हे मृत्तिके ! मैंने जितने भी पाप किया है उनको हरण करो । हे अवनी ! आप सर्वभूतों की जन्मस्थान है, बराहरूप श्रीकृष्ण ने शतबाहुओं के द्वारा आपका उद्धार किया था, हे सुव्रते ! आपको नमस्कार करता हूँ ।

४६ । ततो नाभिदघ्नजले नद्यादौप्रवाहाभिमुखी पुष्करण्यादौ पूर्व्वाभिमुखी सन्, आदौ सामान्यतः स्नात्वाचम्य चतुर्दिक्षु चतुर्हस्त प्रमाणं जलं कृत्वा तत्र तीर्थानि आह्वयेत् ।

अर्थ—तदनन्तर नाभि परिमित जल में प्रवेशकर नदी प्रभृति में प्रवाहाभिमुखी और पुष्करिणी आदि में पूर्वाभिमुखी होकर प्रथम सामान्य स्नान और आचमन करके चतुर्दिक् में चार हस्त परिमाण जल में तीर्थ समूह का आह्वान करे । यथा—

गङ्गे ! च यमुने ! चैव गोदावरि ! सरस्वति !

नर्मदे ! सिन्धु ! कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।। इति।

पठित्वा कृताञ्जलिर्भुत्वा तीर्थानि संप्रार्थयेत् ।

अर्थ हे गङ्गे ! हे यमुने ! हे गोदावरि ! हे सरस्वति ! हे नर्मदे ! हे सिन्धो! कावेरि ! इस जल में आप सब आगमन करें । इस प्रकार पाठ करके अञ्जलि-वद्ध होकर गङ्गादि तीर्थों को सम्यक् रूप से प्रार्थना करे । यथा—

विष्णुपाद प्रसृतासि वैष्णवी विष्णुदेवता ।

त्राहि नस्त्वेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात् ।।

कलिन्दतनये देवि ! परमानन्दवर्द्धिनि ।
स्नामि ते सलिले सर्व्वापराधान्मां विमोचय ॥
पावनं पावनं साक्षाद्दुरितानां महासरः ।
प्रसीद कृपणे मय्येवार्ते त्वं कृष्णवल्लभः ॥
उद्भूतं कृष्णपादाब्जादरिष्ट बधतश्छलात् ।
पाहि मां पामरं स्नामि श्यामकुण्डे !जले तव ॥
श्रीराधासमसौभाग्यं सर्व्वतीर्थप्रवन्दितम् ।
प्रसीद राधिकाकुण्ड ! स्नामि ते सलिले शुभे ॥इति॥

अर्थ—हे गङ्गे ! आप विष्णुपादप्रसृता और वैष्णवी हैं, विष्णु आपका देवता है, आजन्म मरण पर्यन्त पापराशियों से मेरी रक्षा करें। हे देविकलिन्द तनये ! हे परमानन्दवर्द्धिनी यमुने ! आप के जल में स्नान करता हूँ, मुझे सर्व अपराधों से मुक्त करो। हे पावनाख्य महासरोवर कृष्णवल्लभ ! आप साक्षात् पाप समूहों के नाशक है, मैं आर्त्त और दुःखी हूँ, मेरे प्रति प्रसन्न होओ। हे श्यामकुण्ड ! आप अरिष्टवध के छल से श्रीकृष्णपादपद्म से उद्भूत हुए हो, आपके जल में स्नान करता हूँ; मैं पामर व्यक्ति हूँ, मेरी रक्षा करो। हे राधाकुण्डे ! आप श्रीराधिकासम सौभाग्यवान् हैं, आपके पुण्य जलमें स्नान कररहा हूँ, आप मेरे प्रति प्रसन्न होओ।

४७। तीर्थ प्रार्थनाश्लोकपञ्चकं पठित्वा श्रीकृष्णचरणाम्भोजं ध्यात्वा चावगुण्ठनमुद्रया सप्तधा मूलमन्त्रं जप्त्वा तीर्थजलं पुनः सपुटाञ्जलिना स्वमूर्धिन वारत्रयमभिषिच्य स्वमन्त्रं जपन् सम्मज्ज्य स्नायात्। ततः उत्थाय पुनश्च स्वमन्त्रं जपन् कुम्भमुद्रया वारत्रयं जलं स्वमूर्धिन अभिसिच्य मार्जनी वस्त्रेण अङ्गानि संमार्ज्ज्य तीर्थ महिमापद्यानि पठेत्। तानि पद्यानि यथा—

अर्थ-तीर्थ प्रार्थना श्लोकपञ्चक पाठ करके श्रीकृष्णचरणकमल ध्यानपुर्वक अवगुण्ठन मुद्रा द्वारा सप्तवार मूलमन्त्र का जप करे, तीर्थजल में पुनः अञ्जलि से स्वमस्तक पर तीनवार अभिषेक करके स्वमन्त्र का जप करते हुए निमग्न होकर स्नान करे। अनन्तर जल से उठकर पुनः स्वमन्त्र का जप करते हुए कुम्भमुद्रा से तीनवार जल को स्वमस्तक पर अभिषेक करके मार्जनीवस्त्र से अङ्गों को संमार्जन करके तीर्थमहिमा प्रतिपादक पद्यसमूहका पाठकरे। यथा-

महापापभङ्गे! दयालो नु गङ्गे! महेशोत्तमाङ्गे! लसच्चित्तरङ्गे!।
द्रवब्रह्मधामाच्युतांघ्रचब्जजे, मा, पुनीहीनकन्ये, प्रवाहोर्मिधन्ये !॥
चिदानन्दभानोः सदानन्दसूनोः परप्रेमपात्री द्रवब्रह्मगात्री।
अघानां लवित्री जगत्क्षेमधात्री पवित्रीक्रियान्नो वपुर्मित्रपुत्री ॥
अये श्रीसरः पावनं नाम सार्थं भवत्वानतं स्नानतो मां कृतार्थम्।
कुरुष्वाशु गोपीरहःकेलिकीर्त्ति वदन्तं वसन्तं त्वया तुल्यवृत्तिम् ॥
अरिष्टामृताश्नन्दसूनोः प्रकाशं महानन्दवारीन्दिराचिद्विलासम्।
अरिष्टं ममाग प्रकृष्टं लुनीहि सदा श्यामकुण्डं वपुर्नः पुनीहि ॥
नमस्ते समस्तेश्वरप्रेमवन्यं महातीर्थ निर्म्मञ्छनीयात्मधन्यम्।
अये राधिकाकुण्डगोषण्डनन्दं वपुर्नः पुनीहि प्रमोदीश -शन्दम्॥ इति

हे महापापभङ्गे ! दयावति गङ्गे ! आप सर्वदा महेश्वर उत्तमाङ्ग में आनन्दचित्त से विहार करती हो, हे द्रवब्रह्मस्वरूपे ! हे विष्णुपादसम्भूते ! हे इनकन्ये ! हे प्रवाहोर्मिशालिनि ! हे धन्ये ! मुझको पवित्र करो। चिदानन्द प्रकाश नन्दनन्दन की जो प्रेमपात्री और द्रवब्रह्मगात्री हैं, जो दर्शनमात्र से ही सर्वपाप ध्वंस करती हैं, उस जगन्मङ्गलदात्री सूर्यनन्दिनी यमुना मेरे शरीर को पवित्र करें। हे पावन सरोवर ! आपका पावन नाम अर्थयुक्त है मैं सम्यक् नत होकर स्नान करता हूँ, मुझको कृतार्थ करो। श्रीगोपीगण की रह केलिवार्त्ता कीर्त्तन करने की एवं आपके निकट बास करने की मुझको शीघ्रही योग्यता प्रदान करो। इन्दिरा के चिद्विलासस्वरूप महानन्द जल। हे अरिष्टाख्य सरोवर ! आप ही श्यामकुण्डहैं, अमृतमय श्रीनन्दनन्दन के द्वारा आपका प्रकाश है, मेरे अपराधरूप अरिष्ट को प्रकृष्टरूप से छेदन करो, एवं मेरे गात्र को पवित्र करो। हे राधाकुण्ड ! आप सबके ईश्वर श्रीनन्दनन्दन की प्रेमवन्यास्वरूप हैं, एवं महा-तीर्थगण आप को निर्मञ्छन करते हैं, आप धन्य हैं। श्रीकृष्ण और तदीय गोसमूह को आप आनन्ददाता हैं, प्रेमानन्द दान से मेरे शरीर को पवित्र करें।

४८। ततस्तीर्थतटे आर्द्रवस्त्रं परित्यज्य शुष्कवस्त्रं परिधाय तत्रोपविश्य विधिवत् तिलकं कृत्वा पूर्व्वाभिमुखीभूयाचम्यादौ गुरु-देवं प्रार्थयेत्। यथा—

योऽन्धीकृत्य कुतर्कघूकपटलीमज्ञानमोहान्धहृत्
संनुदंच कुकर्म्मजाड्यमभितो हृत्पद्ममुल्लासयन्।

राधामाधवगूढ़रूपसरणीमुद्भाषयन् भास्करः
स त्वं श्रीगुरुदेव पाहि पतितं मां दीनमन्धं जनम् ।। इति

अर्थ—तीर्थ महिमा पाठानन्तर तीर्थतट पर आर्द्रवस्त्र त्यागकरके शुष्कवस्त्र परिधानपुर्वक उस स्थानपर बैठकर विधिवत् तिलक करे एवं पूर्वाभिमुखी होकर आचमन कर प्रथम श्रीगुरुदेव को प्रार्थना करे—हे गुरुदेव ! आप सूर्य्य सदृश होकर कुत्सित तर्करूपपेचक पटली को अन्धीभूत करके अज्ञानमोहरूप अन्धकार को हरण करते हैं, एवं कुकर्म्मरूप जाड्य का सर्वतोभाव से विनाश करके हृदपद्म को उल्लसित कर श्रीराधामाधव के गूढ़ रूपमाधुर्य्यास्वाद मार्ग को उद्भासित करते हैं, मैं दीन पतित ग्रन्धजन हूँ, मेंरी रक्षा करें।

४६। ततः श्रीकृष्णं ध्यायेत्। यथा यामले—

ध्यायेत् सौरीतटे दिव्यैश्वर्यमाधुर्य्यभूषिते।
वैकुण्ठोत्तम-सौभाग्ये श्रीकृष्णाभ्यधिदैवते।।
पृथिव्यां विद्यमानेऽप्यप्राकृते सच्चिदात्मके।
माथुरे मधुरैश्वर्य-माधुर्य्यनिकराकरे।।
नानारत्नचिते सौरीवारिमारुतसेविते।
निष्कामैः परमाधुर्य्य प्रेमैकपुरुषार्थिभिः।।
महर्षि-प्रमुखैर्ध्यानिगम्येऽनन्तांशसम्भवे।
नानावृक्षलताकुञ्जपुष्पपुञ्जसुसौरभे।।
वृन्दारण्ये कल्पवृक्षतले कोटिरविप्रभे।
लोचनानन्दमाधुर्य्यदिव्ये श्रीरत्नमन्दिरे।।
सहस्रदलमाणिक्यकेशराम्बुजमध्यगे।
रत्नसिंहासनवामे स्थितया राधया सह।।
राजमानं दलालिस्थ-गोपीमण्डलमण्डितम्।
कन्दर्पवीजगायत्रीपुरणाक्षरविग्रहम्।।
द्वात्रिंशल्लक्षणैर्युक्तं चतुःषष्टिगुणान्वितम्।
कन्दर्पकोटिलावण्यं स्फुरच्चिन्मयभूषणम्।।
नवयौवनसम्पन्नं नीलनीरदसुन्दरम्।
रासविलासिनं नित्यं गोविन्दं सुखवारिधिम्।। इति।।

४९—श्रीयमुनातट दिव्य ऐश्वर्य और माधुर्य्य द्वारा भूषित है, वैकुण्ठ से भी उत्तम सौभाग्ययुक्त है, श्रीकृष्ण जिसके अधिदेवता है, पृथ्वी पर विद्यमान होने पर भी अप्राकृत, सच्चिदानन्दात्मक, मधुर ऐश्वर्य्य और माधुर्य्यनिकर का आकर, नाना रत्नखचित, यमुनावारि संस्पृष्ट मारुत के द्वारा सेवित है, परम माधुर्य्य और प्रेम एकमात्र पुरुषार्थ है, उन सब निष्काम महर्षि प्रमुख भक्तगणों के ध्यानगम्य, अनन्तांशसम्भुत, नाना वृक्षलता कुञ्ज विराजित सुसौरभ्य कुसुमपुञ्ज से पूर्ण एवम्भूत श्रीमधुर वृन्दावन में कोटिरविप्रभायुक्त कल्पवृक्षतल के नीचे लोचनानन्द दायक माधुर्य्ययुक्त दिव्य श्रीरत्नमन्दिर में सहस्रदल और माणिक्य केशर संयुक्त कमल के मध्य रत्नसिंहासन पर विराजित वामपार्श्व में अवस्थित श्रीराधिका सहित श्रीगोविन्द का ध्यान करे—जो दलसमूहस्थित गोपीमण्डल मण्डित होकर हैं, कामवीज, कामगायत्री पुरणाक्षर ही जिनका कलेबर है, जो द्वात्रिंशल्लक्षणयुक्त और चतुःषष्टिगुणान्वित है, एवं कोटि काम की अपेक्षा अधिक लावण्यवान है, जिनके अङ्ग में चिन्मय भूषणावली स्फुरित है, जो नवयौवनसम्पन्न, नीलनीरदसुन्दर, रासविलासी और नित्यसुखसमुद्र है ।

५० । ध्यात्वा ततो मूलमन्त्रं दशधा प्रजपेत् सुधीः ।
ततः कन्दर्पगायत्र्या पञ्चधार्घ्यं समर्प्य च ॥
दत्त्वा पञ्चोपचारान् सुधेनुमुद्रां प्रदर्शयेत् ।
स्वमन्त्रं दशधा कामगायत्रीश्च जपेत्ततः च ॥
श्रीकृष्णचरणाम्भोजे पञ्चाञ्जलिजलानि वै ।
समर्प्य मूलमन्त्रेण पीत्वा श्रीचरणामृतम् ॥
नत्वा कृष्णं तथातीर्थं तीर्थानां स्तुतिमापठन् ।
व्रजेद्गृहं ततः प्रीतः श्रीमूर्त्तिसेवनोत्सुकः ॥

ग्रन्थकारने इन चार श्लोकों का अर्थ स्वयं किए हैं, यथा—

तत्रार्थक्रमेणैव तत्रत्यविधिः । तत्रादौ श्रीवृन्दावन-यमुनातटे श्रीयोगपीठे कल्पवृक्षतले श्रीमणिमन्दिरमध्ये श्रीरत्नसिंहासने गोपीगण सेवितं श्रीराधया सह श्रीगोविन्दं ध्यायेत् । ततः कामवीजं दशधा जपेत् । ततः कामगायत्रीं दशधा जपेत् । ततोऽष्टादशाक्षरगोपालमन्त्रं दशधा जपेत् । ततः श्रीराधिकाया महामन्त्रं दशधा जपेत्; ततः श्रीराधिकागायत्रीं दशधा जपेत् । ततः स्वस्वगायत्रीभ्यां पञ्चार्घ्यं समर्प्य जलेनैव पञ्चोपचारपूजां तयोश्च कुर्य्यात् । यथा—"एतत् पाद्यं एष गन्धः, एतत् पुष्पं, एष धूपः, एष दीपः, एतन्नैवेद्यं, इदमाचमनीयम्" इति,

धेनुमुद्रां प्रदर्श्य सर्व्वं तन्मन्त्रेण समर्पयेत् । पुनश्च तत्तन्मन्त्रगायत्रीं जपेत्, निजाभीष्टमन्त्रोऽन्यश्चेत्, तमपि दशधा जपेत् । ततो मानसोपचारान्नानाविध-मिष्टान्न-सुवासित-जल-ताम्बुलादीन् समर्प्य आरात्रिकं कृत्वा श्रीराधाकृष्ण-चरणाम्भोजेषु पञ्चपञ्चधा जलाञ्जलिं समर्प्य श्रीचरणामृतं गृहीत्वा किञ्चित् शिरसि धृत्वा प्रणमेत् ।

चरणामृतधारणमन्त्रो यथा—

अकालमृत्युहरणं सर्व्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णोः पादोदकं पीत्वा शिरसि धारयाम्यहम् ॥

ततस्तीर्थं प्रणम्य तीर्थस्तवपाठं कुर्व्वन् गृहमागच्छेत् ।

अर्थ-स्नानान्त में तीर्थतट पर जो विधि है उसको श्लोक के अर्थक्रम से दिखा रहे हैं—जलसन्निधान में बैठकर जो कृत्य करना होगा, उसके पहले श्रीवृन्दावन यमुनातटपर श्रीयोगपीठ श्रीकल्पतरु के नीचे श्रीमणिमन्दिर के मध्य में श्रीरत्न-सिंहासन पर गोपीगण कर्त्तृक सेवित श्रीराधा सहित श्रीगोविन्द का ध्यान करे। तत्पश्चात् दशवार कामवीज और कामगायत्री का जप करे। पश्चात् अष्टादशाक्षर गोपालमन्त्र दश वार जप करे। पश्चात् श्रीराधामन्त्र दश वार और तद्गायत्री दशवार जप करे। पश्चात् स्व स्व गायत्री द्वारा अर्थात् कामगायत्री से श्रीकृष्ण को पञ्चार्घ्य और राधागायत्री से श्रीराधा को पञ्चार्घ्य समर्पण कर जल के द्वारा ही श्रीराधा और गोविन्द की पञ्चोपचार से पूजा करे। (उभय के श्रीचरणों में तुलसी अर्पण भी करे)। धेनु मुद्रा प्रदर्शन पूर्वक जलद्वारा कल्पित इन सकल उपचारों को उन उन मन्त्रों से समर्पण करे, अर्थात् श्रीकृष्णमन्त्र से श्रीकृष्ण को और श्रीराधामन्त्र से श्रीराधा को प्रत्येक उपचार समर्पित करे। तद् यथा— मन्त्रोच्चारणपूर्वक "एतत् पाद्यं, श्रीकृष्णाय नमः, मन्त्रोच्चारण के साथ, एतत् पाद्यं श्रीराधिकायैः नमः' इत्यादि। पुनः उभय के मन्त्र एवं गायत्री का जप करे। निज अभीष्ट मन्त्र यदि अन्य हो तो उसका भी दशवार जप करे। तत्पश्चात् मानसोपचार से नानाविध मिष्टान्न, सुवासित जल और ताम्बुलादि समर्पण करके मानसिक आरति करे, पश्चात् श्रीराधाकृष्ण चरणपद्म में (भावना के द्वारा) पाँच-पाँच वार जलाञ्जलि समर्पण कर श्रीचरणामृतपान करके मस्तक पर किञ्चित् धारण करते हुए प्रणाम करे। चरणामृत धारण मन्त्र यथा—श्रीविष्णु का पादोदक अकालमृत्यु हारक और सर्वव्याधि विनाशक है, मैं उसका पान करके मस्तक पर धारण करता हूँ। पश्चात् तीर्थ को प्रणाम करके तीर्थस्तव का पाठ करते करते श्रीमूर्त्ति सेवनोत्सुक होकर गृह में आगमन करे। ततो गृहमागत्य पादौ हस्तौ च प्रक्षाल्य

आचम्य शुद्धासने पूर्वाभिमुखी उपविश्य पूजासामग्रीं गृह्णीयात् । अर्थ—पश्चात् घर आकर चरण और हस्त प्रक्षालन करे, एवं आचमन कर शुद्धासन पर पूर्वाभिमुखी होकर उपवेशन कर पूजासामग्री को ग्रहण करे ।

अथ गुर्व्वाज्ञानुसारेण तिलकधारणविधिः यथा पाद्मे (उत्तर २२५।४३)—

आरभ्य नासिकामूलं ललाटान्तं लिखेन्मृदा ।
नासिकायास्त्रयो भागा नासामूलं प्रचक्षते ॥
समारभ्य भ्रूवोर्मूलमन्तरालं प्रकल्पयेत् ॥ इति ।

अर्थ— अनन्तर श्रीगुरुदेव के आदेशानुसार तिलक धारण विधि यथा—नासिका मूल से आरम्भ कर ललाटान्त पर्यन्त मृत्तिका के द्वारा तिलक रचना करे । नासिका के तीन भाग को नासामूल कहते है, भ्रू मूल के मध्य में रेखा द्वय युक्त ऊर्द्धपुण्ड्र की रचना करे ।

५१ । हरिमन्दिर लक्षणम् । (पाद्मे उ०२२५।२७)—

नासादिकेशपर्य्यन्तमूर्द्ध्वपुण्ड्रं सुशोभनम् ।
मध्ये छिद्रसमायुक्तं तद् विद्याद्धरिमन्दिरम् ॥
वामपार्श्वे स्थितो ब्रह्मा दक्षिणे च सदाशिवः ।
मध्ये विष्णुं विजानीयात्तस्मान्मध्यं न लेपयेत् ॥ इति ।

अर्थ— जो नासिका के आदिभाग से केशपर्यन्त विस्तृत है, अतीव सुन्दर और मध्य में अन्तराल विशिष्ट है, उसको ही ऊर्द्धपुण्ड्र हरिमन्दिर कहा जाता है । ऊर्द्धपुण्ड्र के वामभाग में ब्रह्मा, दक्षिण भाग में सदाशिव और मध्यस्थल में हरि अधिष्ठित रहते हैं, इसलिए मध्यस्थल को लेपन नहीं करना चाहिए ।

तिलकरचनांगुलिनियमे स्मृति (ह० भ० वि० ४।८७)—

अनामिका कामदोक्ता मध्यमायुस्करी भवेत् ।
अंगुष्ठः पुष्टिदः प्रोक्तस्तर्ज्जनी मोक्षदायिनी ॥(इति) ।

अर्थ—तिलक रचना विषय में अंगुलि नियम इस प्रकार है, अनामिका अभीष्टदात्री, मध्यमा आयुर्वृद्धिकरी, अङ्गुष्ट पुष्टि साधक एवं तर्जनी मोक्षप्रदात्री है । तत्र तन्मन्त्रन्यासेन ललाटे वाह्वोः कण्ठकूपे वक्षसि च यथोचितं पञ्चतिलकानि कुर्य्यात् । अन्यत्र मृत्तिकामात्रचिह्नेन तिलकानि ज्ञेयानि ।

तिलक रचनाकृत्य में तिलकमन्त्रन्यास के साथ ललाट, दोनों वाहु, कण्ठ-कूप और बक्षस्थल पर यथोचित पञ्चतिलक करना चाहिए । अन्य सात स्थान पर केवल मृत्तिकाचिह्न देकर तिलक रचना करनी चाहिए, अर्थात् ललाटादि

पश्चाङ्गे स्व स्व परिवारानुगत चिह्न रहेंगे, अन्यान्य अङ्गोंपर केवल मृत्तिका-चिह्न होंगे, ऐसा जानना चाहिए ।

द्वादशाङ्गेषु तिलकनिर्माणविधिः यथा (हः भः विः पाद्मोत्तरे २२५।४५-५४)

ललाटे केशवं ध्यायेन्नारायणमथोदरे ।
वक्षस्थले माधवन्तु गोविन्दं कण्ठ-कूपके ॥
विष्णुञ्च दक्षिणे कुक्षौ वाहौ च मधुसूदनम् ।
त्रिविक्रमं कन्धरे तु वामनं वामपार्श्वके ॥
श्रीधरं वामवाहौ तु हृषीकेशन्तु कन्धरे ।
पृष्ठे तु पद्मनाभञ्च कट्यां दामोदरं न्यासेत् ॥
तत्प्रक्षालनतोयन्तु वासुदेवेति मूर्द्धनि ।
ऊर्द्ध्वपुण्ड्रं ललाटे तु सर्व्वेषां प्रथमंस्मृतम् ।
ललाटादिक्रमेणैव धारणन्तु विधीयते ॥

अर्थ— ललाट में केशव, उदर में नारायण, वक्षस्थल पर माधव, कण्ठकूप में गोविन्द, दक्षिण कुक्षि में विष्णु, दक्षिण वाहु पर मधुसूदन, वक्षिणकन्धे पर त्रिविक्रम, वामपार्श्व में वामन, वामवाहु पर श्रीधर, वामकन्धे पर हृषीकेश, पृष्ठभाग में पद्मनाभ एवं कटिदेश में दामोदर को न्यास करना चाहिए। हस्त-द्वयसंस्पृष्टतिलक प्रक्षालन जल "वासुदेवाय नमः" उच्चारण करके मस्तक पर देना चाहिए, द्वादश अङ्गों में, प्रथम ललाट पर ऊर्द्धपुण्ड्र कर तत्क्रम से अन्यान्य अङ्गों में करना चाहिए। "केशवाय नमः" प्रत्येकमुक्त्वा क्रमेण तिलकं कुर्यात् ततो नाममुद्राधारणन्तु ललाटदेशे कण्ठे वाह्वोर्वक्षसि च पञ्चस्थानेषु कुर्यात्। ततः पुनः चरणामृतं पिवेत्। अर्थ—'केशवाय नमः' इत्यादि प्रत्येक का मन्त्र बोलकर क्रम से तिलक करे। पश्चात् ललाट, कण्ठ, वाहुयुगल और वक्षस्थल इन पाँच स्थानों पर नाममुद्रा धारण करे। पश्चात् श्रीचरणामृत पान करे।

अथ भगवत्प्रबोधनम्। तत्रादौ प्राङ्गणे श्रीगुरुदेवं प्रणमेत्।

प्रणामवचनं यथा यामले—

नमस्ते गुरुदेवाय सर्व्वसिद्धिप्रदायिने ।
सर्व्वमङ्गलरूपाय सर्व्वानन्दविधायिने ॥ इति ।

ततस्तत्प्रार्थना यथा तत्रैव—

श्रीगुरो परमानन्द प्रेमानन्दफलप्रद ।
व्रजानन्दप्रदानन्दसेवायां मां नियोजय ॥ इति ।

अर्थ—अनन्तर श्रीभगवत्प्रबोधन कृत्य। उसके पहले प्राङ्गण में श्रीगुरुदेव को प्रणाम करे। प्रणाम वाक्य यथा—सर्व सिद्धि प्रदाता, सर्वमङ्गल रूप और सर्वानन्दविधानकारी श्रीगुरुदेव को प्रणाम करता हूँ। पश्चात् उनके श्रीचरण में प्रार्थना करे, यथा—हे परमानन्द-प्रेमानन्द फलप्रद श्रीगुरो! व्रजानन्दप्रद-श्रीकृष्ण सेवानन्दकृत्य में मुझको नियुक्त करें।

५२। ततः श्रीमन्दिरद्वारं गत्वा श्रीकृष्ण प्रबोधन वाक्यं पठेत्, यथा—पाद्मे—

ईश्वर! श्रीहरे! कृष्ण! देवकीनन्दन! प्रभो!।
निद्रां मुञ्च जगन्नाथ! प्रभात समयो भवेत्॥

यामले च—गो-गोप गोकुलानन्द! यशोदानन्दनन्दन!।
उत्तिष्ठ राधया सार्द्धं प्रातरासीज्जगत्पते!॥

इति पद्यद्वयंपठित्वा तालिवादन घण्टावादनपूर्व्वकं द्वारमुद्घाटयेत्।

अर्थ—पश्चात् श्रीमन्दिर के द्वार पर जाकर श्रीकृष्ण का प्रबोधन वाक्य पाठकरे, यथा-हे ईश्वर! हेहरे! श्रीकृष्ण! हे प्रभो! देबकीनन्दन जगन्नाथ! प्रभात समय हुआ है निद्रा त्याग करो। हे जगत्पते हे गो-गोप-गोकुलानन्द! हे यशोदानन्द-नन्दन! प्रातः काल हुआ है, श्रीराधिका के साथ गात्रोत्थान करो। इन पद्यद्वय का पाठ करके तालि और घण्टावादन पूर्वक द्वारोद्घाटन करना चाहिए।

ततो दीपं प्रज्वाल्य श्रीसिंहासननिकटे गत्वा श्रीचरणावादौ स्पृष्ट्वा प्रयत्नतः तौ पुनरुत्थाप्यश्रीसिंहासनोपरिसंस्थाप्य पुनःप्रार्थयेत् यथा-तद्वचनम्—

सोऽवसावदभ्रकरुणोभगवान् विवृद्धप्रेमेक्षितेननयनाम्बुरुहंविजृम्भन्।
उत्थायविश्वविजयाय च नो विषादंमाध्व्यागिरापनयतात्पुरुषःपुराणः

देव प्रपन्नार्त्तिहर! प्रसादं कुरु केशवः!।
अवलोकनदानेन भूयो मां पावयाच्युत!॥इति॥

अर्थ—पश्चात् दीप प्रज्वालितकर सिंहासन के निकट जाकर अग्रे श्रीचरण स्पर्शकरके यत्न के साथ श्रीयुगलमूर्ति को शय्या से उत्थापनकर सिंहासनोपरि स्थापन कर पुनः प्रार्थना करे, यथा—हे परमकरुण पुराणपुरुष भगवान्! नयनाम्बुरुह विकाश पूर्वक विश्वोद्भव के लिए शय्या से गात्रोत्थान करके सातिशय प्रेमदृष्टि एवं मधुमय वाक्यों से हमारे विषादों का हरणकरो। हे देव!

हे प्रपन्नार्तिहर ! हे केशव मेरेप्रति कृपाकरो। हे अच्युत ! पुनः पुनः कृपादृष्टि दान से मुझको पवित्र करो।

५३। ततः आचमनार्थं प्रोक्षणपात्रे जलगण्डुषानि दत्वा श्रीमुखकरचरणादिकं सूक्ष्मार्द्रवस्त्रेण संमार्ज्य निर्माल्योत्तारणंकृत्वा स्वकरौ प्रक्षाल्य श्रीचरणेषु तुलसीपत्रमञ्जरीः तत्तन्मन्त्राभ्यां समर्प्य सर्पिकान्नलड्डूकादि निवेद्य सुवासितं जलं दत्वाचमनं दद्यात्। ततः ताम्बुलं समर्प्य पुनराचमनं दत्वा मङ्गलनिराजनं घण्टा-शङ्खादि वादनपूर्व्वकं सजलं शङ्खं भ्रामयित्वा जलं श्रीगरुड़ोपरि भक्तजन-मस्तकेषु च प्रक्षिपेदिति।

तत्र नीराजनविधिक्रमो यथा—यामले—

नवभिः सप्तभिर्मानैरङ्गुल्या तुलर्वर्तिभिः।
शशिगोघृतसिक्ताभिः पञ्चभिरीषिकान्तरैः॥
प्रज्वाल्य यत्नतो दीपं कामवीजं जपन् सुधीः।
करयोर्व्युत्क्रमेनैवं तर्ज्जन्यङ्गुष्ठयोगतः॥
क्षेपणं भ्रामयंस्तस्योपरि मुद्रां प्रदर्श्य च।
शङ्खोदकेन सहितं मूलमन्त्रेण चार्पयेत्॥
गायत्रीञ्च जपन् पुष्पाञ्जलिमग्रे समर्प्य च।
मूलमन्त्रेण वादित्वा स्तुत्वा घण्टाञ्च वादयन्॥
नीराजनं ततः कुर्यात् भ्रामयित्वा पुनः पुनः।
चतुष्कं पादयोर्नाभौ द्विरास्ये त्रिविधं ततः॥
सप्तधा निखिलाङ्गेषु हरेर्नीराजनं जलम्।
तुलसी-गरुड़-पृथ्वी वैष्णवानां क्रमात्ततः॥
भ्रामयेत् सजलं शङ्खमष्टधा मनुमाजपन्।
तज्जलं गरुड़े दत्वा वैष्णवेषु च प्रक्षिपेत्॥इति॥

अर्थ—प्रार्थनानन्तर युगलमूर्ति के आचमनार्थ प्रक्षालन पात्र में कतिपय जल गण्डुष देकर सूक्ष्म आर्द्र वस्त्र से श्रीमुखकरचरणादि संमार्जन करे, एवं (युगल के श्रीचरणों में दत्ततुलसी भिन्न) निर्माल्य को उतारकर स्वहस्तयुगल को प्रक्षालन

पूर्वक श्रीयुगलमूर्त्ति के श्रीचरणों में तुलसीपत्रमञ्जरी तत्तत् मन्त्रों से समर्पण करे, अर्थात् श्रीकृष्ण मन्त्र से श्रीकृष्णचरण में और श्रीराधा मन्त्र से श्रीराधा चरण में अर्पण कर गोघृतान्न और लड्डू प्रभृति निवेदन कर सुवासित जलसे आचमन करावे। पश्चात् ताम्बुल समर्पणकर पुनराचमन देकर घण्टा-शङ्खादि वादनपूर्वक मङ्गल नीराजन (आरती) करे एवं सजल शङ्ख घुमाकर श्रीगरुड़ोपरि एवं भक्तगणों के मस्तकों-पर शङ्खजल का प्रक्षेपण करे। नीराजनक्रम-विधि यथा—नवाङ्गुल किम्वा सप्ताङ्गुल परिमाण पाँच तूलनिर्मित वर्त्तिका (वत्ती) कर्पूर और गोघृत से सिक्त करे, जिस वत्ती के मध्य में ईषीका (खड़) रहे, इस प्रकार वर्त्तिकायुक्त दीप यत्न के साथ प्रज्वालित कर तदुपरि कामवीज जप करे। तर्जनी एवं अंगुष्ठ को मिलाकर हस्तद्वय के व्युत्क्रम से आरती प्रदीप के ऊपर क्षेपण और भ्रमण मुद्रा प्रदर्शन कराकर शङ्खोदक के साथ मूलमन्त्र से बर्त्तिका समर्पण करे, एवं गायत्री जप करके सर्व प्रथम पुष्पाञ्जलि समर्पण कर स्तव और मूलमन्त्र से घण्टा वादन करते करते प्रदीप को पुनः पुनः घुमाकर नीराजन करे। श्रीचरण कमलों में दो वार, वदन कमल में तीन वार और सर्वाङ्ग में सातवार इस प्रकार से श्रीराधागोविन्द की नीराजन की रीति है। उसके अनन्तर तुलसी, गरुड़, पृथ्वी और वैष्णवादि को नीराजन करे। जलपूर्ण शङ्ख, मन्त्र जप पूर्वक श्रीमूर्त्ति के अङ्ग में अष्टवार घुमाकर उस जल को श्रीगरुड़ और वैष्णवों के ऊपर प्रक्षेपण करना चाहिए।

प्रणमेत्ततः। ततः श्रीमन्दिरादिलेपनमार्ज्जनादिकं कृत्वा स्नानपूजाभोजन-पात्रमार्ज्जन-धौतादिकं विधाय नैवेद्य-जलादिकं संस्कृत्य गन्धधूपादिमाल्य-पुष्पाणि चिनुयात्। अर्थ— तत्पश्चात् प्रणाम करे। अनन्तर श्रीमन्दिरादि का लेपन और मार्ज्जनादि करके स्नानपात्र, पूजापात्र और भोजनपात्रों का मार्ज्जन धौतादि करे नैवेद्य जलादि का संस्कार कर गन्धधूपादि का आयोजन कर पुष्पचयन करना चाहिए।

इति सूर्योदयकालपर्यन्तं कृत्यम्। सूर्योदयकालपर्यन्त का कृत्य पूर्ण हुआ।

* इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां प्रथमः प्रकाशः *

** श्रीसाधनामृतचन्द्रिका का प्रथम प्रकाश समाप्त हुआ **



* द्वितीयः प्रकाशः *

१ । अथ प्रातः षड्दण्डकृत्यम् । तत्रादौ तुलसीपत्रमञ्जरी-चयनं कुर्यात् । मन्त्रौ यथा स्कान्धे—

तुलस्यामृतजन्मासि सदा त्वं केशवप्रिये ।
केशवार्थं विचिनोमि वरदा भव शोभने ! ॥
त्वदङ्गसम्भवैः पत्रैः पूजयामि यथा हरिम् ।
तथा कुरु पवित्राङ्गि ! कलौ मलविनाशिनि ! ॥ इति ॥

अर्थ—अनन्तर छः दण्डात्मक प्रातःकृत्य का उल्लेख करते हैं-प्रातःकृत्य में प्रथम साधक तुलसीपत्रमञ्जरी चयन करे। मन्त्र यथा-स्कान्धे— हे तुलसी! आप अमृतजन्मा और सर्वदा केशवप्रिया हैं, मैं केशव के लिए चयन कर रहा हूँ। हे शोभने ! मेरे प्रति वरदात्री होओ। हे पवित्राङ्गि ! आपके अङ्ग से उत्पन्न पत्र से जिस प्रकार श्रीहरि की पूजा कर सकूँ, हे कलिमलनाशिनि तुलसि ! कृपा करके मुझे वैसा ही करो।

२ । अथ पूजाविधिक्रमः (यथा-यामले)—

वैष्णवो देवपूजार्थं पूर्वाभिमुखो आसने ।
दर्भविनिर्मिते शुद्धे उपविश्य निजं गुरुम् ॥
नत्वा स्तुत्वाच संप्रार्थ्य निजेष्टमनुमास्मरन् ।
वाग्यतैकमनास्तत्र सम्प्रदायानुसारतः ॥
शङ्खादिपूजासम्भारान्नचस्येत्तत्तत्पदेषु तान् ।
देवस्य दक्षिणाग्रे वै स्नानतोयं हि संस्कृतम् ॥
स्नानाचमनपात्रस्तु समीपे विन्यस्येत्ततः ।
स्वस्य वामाग्रतः शङ्खं साधारं स्थापयेद्बुधः ॥
तत्रैव घण्टां साधारं वामे नैवेद्यधूपकम् ।
तुलसीगन्धपुष्पादिभाजनानि तु दक्षिणे ॥
तत्रैव घृतदीपञ्च तैलदीपन्तु वामतः ।
सम्भारानपरान्नचस्येत् स्वदृष्टिविषये पदे ॥
करप्रक्षालनार्थञ्च पात्रमेकं स्वपृष्ठतः ॥ इति ॥

अर्थ—वैष्णव श्रीकृष्णपूजा के लिए कुशनिर्मित शुद्धासन पर पूर्वाभिमुख बैठकर स्वीय गुरुदेव के चरणों में नति-स्तुति और प्रार्थना करके बाक् मनसंयम के साथ एकाग्रचित्त से सम्प्रदायानुसार निज इष्टमन्त्र का स्मरण करे, एवं शङ्खादि पूजासम्भार यथास्थान स्थापन करे, श्रीमूर्त्ति के दक्षिणाग्र में सुसंस्कृत स्नानीय जल एवं निकट में स्नान और आचमन का पात्र स्थापन करे। स्वीय वामपार्श्व के अग्रदेश में साधार शङ्ख, साधार घण्टा एवं नैवेद्य धूप स्थापन करे, आपना दक्षिण में तुलसी गन्ध-पुष्पादि के पात्र और घृतप्रदीप स्थापन करके वामदिशा में तैलप्रदीप रखे। अन्यान्य पूजाद्रव्य निज दृष्टिस्थल पर रखकर हस्तप्रक्षालनार्थ एक पात्र निज के पृष्ठदेश में स्थापन करना चाहिए।

३। तत्र शङ्खस्थापनं यथा—आदौ स्ववामाग्रे भूमौ जलेन त्रिकोणमण्डलं लिखित्वा तदुपरि 'ॐ नमः सुदर्शनायास्त्राय फट्' इतिमन्त्रेण स्थापयेत्।'ॐ हृदयाय नमः' इतिमन्त्रेण शङ्खमध्ये गन्धादीन् न्यस्येत्। 'ॐ सोममण्डलाय षोड़श कलात्मने नमः' इति मन्त्रेण जलं पूरयेत्। तदुपरि 'गङ्गे च यमुने चैव' इत्यादि तीर्थमन्त्रं पठित्वा अंकुशमुद्रया तीर्थान्यावाहयेत्। कामवीजेन तुलसी-पत्रं तत्र विन्यस्य कामगायत्र्या साधारशङ्खं पूजयेत्। ततो धेनुमुद्रां प्रदर्श्य तत्रा-वगुण्ठनमुद्रया मूलमन्त्रमष्टधा जपेत्। ततश्च तुलसीपत्रेण किञ्चिज्जलं स्नानादि-पात्रपूजासम्भारेषु सिञ्चेत्। इति।

अर्थ—शङ्खस्थापन विधि यथा-प्रथम स्ववामाग्र भूमि पर जल से त्रिकोण मण्डल लिखकर तदुपरि 'ॐ नमः सुदर्शनायास्त्राय फट्' इस मन्त्र से शङ्खस्थापन करे। 'ॐ हृदयाय नमः' इस मन्त्र से शङ्खके मध्य में गन्धादि न्यास करे।'ॐ सोममण्डलाय षोड़शकलात्मने नमः' इस मन्त्र से जल से पूर्ण करे। तदुपरि 'गङ्गे च' इत्यादि तीर्थ मन्त्र का पाठ करके अङ्कुश मुद्रा से तीर्थसमूह का आह्वान करे। इस शङ्ख के मध्य में कामवीज से तुलसीपत्र विन्यास करके कामगायत्री द्वारा आधार सहित शङ्ख की पूजा करे। पश्चात् धेनुमुद्रा शङ्ख के ऊपर दिखाकर अवगुण्ठन मुद्रा द्वारा मूलमन्त्र अष्टवार जप करे। पश्चात् स्नानादि पात्र और पूजाद्रव्य के ऊपर किञ्चित् तुलसीपत्र का जल सेचन करना चाहिए।

४। अथ घण्टास्थापनम्—

सर्व्ववाद्यमयी घण्टा देवदेवस्य वल्लभा।
तस्मात् सर्व्वप्रयत्नेन घण्टानादन्तु कारयेत्॥

नारदपञ्चरात्रे—आवाहनार्घ्ये धूपे च पुष्पनैवेद्ययोजने।
नित्यमेतां प्रयुञ्जीत तन्मन्त्रेणाभिमन्त्रिताम्॥ इति।

ततश्च वामे आधारोपरि कामवीजेन घण्टां संस्थाप्य 'ॐ जयध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' इति मन्त्रमुच्चार्य्य गन्धपुष्पेणाभ्यच्चर्य वादयेदिति

अर्थ—घण्टा सर्ववाद्यमयी और श्रीकृष्णवल्लभा है, इसलिए यत्न के सहित घण्टानाद कराना चाहिए। आवाहन, अर्घ्यदान, धूप, पुष्प और नैवेद्य समर्पण काल में नित्यही तन्मन्त्र से अभिमन्त्रित घण्टावादन करे। पश्चात् वामदिक् में आधारोपरि घण्टा स्थापन कर 'ॐ जयध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' इति मन्त्रोच्चारण पूर्वक गन्धपुष्प द्वारा अर्चना करके वादन करे।

५। किञ्चैकादशे (२७।१२)—

शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा मता ॥ इति।

अर्थ—शिलामयी, काष्ठमयी, धातुमयी, लेप्या (मृत्तिका चन्दनादि निर्मिता) लेख्या (चित्रपटादि लिखिता), वालुकामयी और मनोमयी प्रतिमा आठ प्रकार की मानी जाती है।

तत्र प्रतिमानुसारेणैव स्नानादिकं यथायोग्यं कार्य्यमिति।

अर्थ—प्रतिमानुसार यथायोग्य स्नानादि करणीय है।

सेवानिष्ठा हरेः श्रीमद्वैष्णवाः पाञ्चरात्रिकाः।
प्राकट्यादखिलाङ्गानां श्रीमूर्त्ति बहुमन्वते ॥
सेव्या निजनिजैरेव मन्त्रैः स्वस्वेष्टमूर्त्तयः।
शालग्रामेऽनेकरूपे नियमो नैवविद्यते ॥

यत्र निजाभीष्टमन्त्रेणैव सेवनमिति।

अर्थ—श्रीहरि को सेवानिष्ठ पञ्चरात्रानुवर्त्ती श्रीमद् वैष्णवगण निखिलाङ्ग प्राकट्य के कारण से श्रीमूर्त्ति को ही अधिक मानकर सेवा करे। निज निज इष्टमन्त्र से निज निज इष्टमूर्त्ति की सेवा करना उचित है, किन्तु शालग्रामसेवा के लिए ये नियम नही है, कारण शालग्राम अनेकरूपी अर्थात् सकल भगवत्स्वरूप है, इसलिए शालग्राम की निजाभीष्ट मन्त्र से ही इष्ट सेवा होती है।

ततश्चादौ श्रीगुरुदेवं पूर्व्ववत् प्रणम्य प्रार्थ्य निजाभीष्टमन्त्रं दशधा स्मरेत्। ततः स्नानार्थं देवं प्रार्थयेत्; यथा—

यत्पादशौचतोयेन यद्दासपादवारिणा।
पवित्रमखिलं विश्वं स त्वं श्रीराधया सह ॥

निमग्नोऽपि महानन्दवारिधौ करुणार्णव ।
स्नानाय भव गोविन्द भक्तवाञ्छाभिपूरक ॥इति ॥

अर्थ—पश्चात् साधक प्रथम श्रीगुरुदेव को पूर्ववत् प्रणाम और प्रार्थना करके निजाभीष्ट मन्त्र का दशवार स्मरण करे । पश्चात् स्नानार्थं श्रीयुगलमूर्त्ति की प्रार्थना करे, यथा—जिनके एवं यद्दासगण के पादशौच जल से अखिल विश्व पवित्र होता है, वे ही आप श्रीराधा सहित महानन्द सागर में निमग्न रहकर भी हे करुणार्णव भक्तवाञ्छाभिपूरक गोविन्द ! स्नानार्थ (श्रीराधिकाके साथ) आगमन करो ।

६ ।ततश्च देवं स्नानपात्रोपरि तुलसीपत्रासने संस्थाप्य तच्चरणपङ्कजे तुलसीदलानि समर्प्य किञ्चित् शङ्खोदकं दत्वा घण्टावादन पूर्व्वकं तन्मूलमन्त्रं जपन् शङ्खोदकेनैवस्नापयेत् । तत्रादौ गन्धतैलोद्वर्त्तनादिकश्च यथासम्भवविधिः । ततश्चाङ्गानि मार्ज्जयित्वा पुनः संस्थाप्य ततोऽङ्गजलमोचनं कारयित्वा शुष्कवस्त्रंपरिधाप्यासनान्तरेसंस्थाप्य सम्प्रदायानुसारेण तिलकं दत्वा तुलसीपत्राणि समर्प्य तेनभूषयित्वा गन्धमाल्यादिकं समर्प्य गुग्गुलधूपं दत्वा मिष्टान्नादि सुवासित-जलादिकं मूलमन्त्रेणैव समर्प्य वहिर्गत्वासनान्तरे पूर्व्वाभिमुखो उपविश्य मानसोपचारैश्च तं सेवेत । ततश्च तालिवादनपूर्व्वकं द्वारमुद्घाट्याचमनं दत्त्वा ताम्बुलं समर्प्य पुनः धूपंदत्वा पूर्व्ववत् शृङ्गारारात्रिकं कुर्य्यात् ।

अर्थ—तत्पश्चात् श्रीमूर्त्ति (युगलमूर्त्ति) को स्नानपात्र के ऊपर तुलसीपत्रासन पर संस्थापना करके तच्चरण पङ्कज में तुलसी पत्रावली समर्पण करे, एवं किञ्चित् शङ्खोदक देकर घण्टवादन पूर्वक तन्मूलमन्त्र जप करते करते शङ्ख के जल से ही स्नान करावे । स्नान के पूर्व श्रीयुगलमूर्त्ति के श्रीअङ्ग में गन्धतैलादि प्रदान कर यथासम्भव विधि से उद्वर्त्तनादि करे । पश्चात् अङ्गमार्जना करके पुनः सम्यक् प्रकार से स्नान करावे, पश्चात् श्रीअङ्ग से जलमोचन कर शुष्कवस्त्र परिधान कराकर आसनान्तर पर संस्थापन करे, एवं सम्प्रदायानुसार तिलक देकर तुलसी पत्रावली (उभयके चरणों में) समर्पण करके सम्प्रदायानुसार वेषभूषा से उभय को विभूषित करे, गन्धपुष्प माल्यादि भी समर्पण करके गुग्गुलधुप देवे । अनन्तर मिष्टान्नादि सुवासित जलादि मूलमन्त्र से समर्पण करके बाहर जाकर आसन पर पूर्वाभिमुखीबैठकर मानसोपचार से श्री-

युगलमूर्त्ति की सेवा करे। पश्चात् तालीवादनपूर्वक द्वारोद्घाटन करके आचमन देवे, एवं ताम्बुल समर्पण कर पुनः धूप देकर पूर्ववत् (मङ्गल आरती-के समान) शृङ्गार आरतो करे।

७। अथ प्रातर्लीलास्मरणम् ; तत्रादौ गोरचन्द्रस्य (भावना-सार संग्रहे ; यथा—

प्रातः स्वःसरिति स्वपार्षदवृतः स्नात्वा प्रसूनादिभि—
स्तां संपूज्य गृहीतचारुवसनः स्रक्चन्दनालङ्कृतः।
कृत्वा विष्णुसमर्च्चनादि सगणो भूक्त्वान्नमाचम्य सद्
वीटीश्चान्य गृहे क्षणं स्वपिति यस्तं गौरमध्येम्यहम् ॥इति॥

अर्थ—तदनन्तर प्रातःलीला स्मरणीय है, श्रीगोविन्द की प्रातःलीला यथा-जो प्रातःकाल सपार्षद स्नान करके पुष्पादि द्वारा गङ्गापूजा करते हैं, तदनन्तर गृह आकर उत्तम वसन परिधान पूर्वक मालाचन्दन से विभूषित होकर विष्णु-पूजा करते हैं एवं भक्तगणसह अन्न (विष्णुप्रसाद) भोजन और आचमन कर ताम्बुल ग्रहण करके गृहान्तर में एकक्षण शयन करते हैं, उन श्रीगौरचन्द्र का आश्रय ग्रहण करता हूँ।

स्मरणमङ्गले—राधां स्नातविभूषितां व्रजपयाहूतां सखीभिः प्रगे
तद्गेहे विहितान्नपाकरचनां कृष्णावशेषाशनाम्।
कृष्णं बुद्धमवाप्तधेनुसदनं निर्व्यूढ़गोदोहनं
सुस्नातं कृतभोजनं सहचरैस्ताञ्चाथ तञ्चाश्रये ॥इति

अर्थ—जो प्रातःकाल स्नान और विविध अलङ्कारादि से अङ्ग विभूषित करके यशोदा कर्त्तृक आहूत होकर तदीय गृह में सखीगण सह पाकरचना एवं श्रीकृष्णभुक्तावशेष भोजन करती हैं, मैं उन श्रीमती राधिका के चरणाश्रय करता हूँ। जो प्रभातकाल में जागरण, गोशाला को गमन और गो-दोहन कार्य समापन करके स्नान एवं सहचरगण के सहित भोजन करते हैं, उन श्रीकृष्ण के भी चरणाश्रय ग्रहण करता हूँ।

८। अथ प्रातः पूजाविधिः—तत्रादौ श्रीनवद्वीपमध्ये श्रीरत्न-मन्दिरे श्रीरत्नसिंहासनोपरि भक्तवृन्द परिसेवितं श्रीकृष्णचैतन्यदेवं श्रीगुर्व्वादिक्रमेण ध्यात्वा पूजयेत्। तत्र ध्यानादि श्रीचैतन्यार्च्चन-चन्द्रिकायाम्—सिंहासनस्य मध्ये श्रीगौरकृष्णं स्मरेततः।

दक्षिणे बलदेवं श्रीनित्यानन्दसुविग्रहम् ॥

वामे गदाधरं देवमानन्दशक्तिविग्रहम् ।
देवस्याग्रे कर्णिकायामद्वैतं विश्वपावनम् ॥
तद्दक्षिणे भक्तवर्यं श्रीवासं छत्रहस्तकम् ।
चतुर्दिक्षु महानन्दमयं भक्तगणं तथा ॥ इति ॥

अर्थ—अनन्तर प्रातः कालीन पूजाविधिक्रम—मानस एवं वाह्यरूप से पूजा विधि दो प्रकार है, प्रथम मानस एवं द्वितीय वाह्य है; प्रथम श्रीमन्महाप्रभु की मानसपूजा श्रीनवद्वीपस्थ श्रीरत्नमन्दिर में श्रीरत्नसिंहासनोपरि भक्तवृन्द परिसेवित श्रीकृष्णचैतन्यदेव को श्रीगुर्वादिक्रम से ध्यान करके पूजा करे। ध्यानादि यथा-सिंहासन के मध्य में श्रीगौरकृष्ण को स्मरण करे। तद्दक्षिण में बलदेव स्वरूप श्रीनित्यानन्द विग्रह को, वाम में आनन्दशक्तिविग्रह श्रीगदाधर देव को, श्रीगौराङ्ग के अग्र कर्णिका में विश्वपावन श्रीअद्वैत को, तद्दक्षिण में छत्रहस्त भक्तश्रेष्ठ श्रीवास को एवं चतुर्दिक् में महानन्दमय भक्तगण को स्मरण करे।

९ । श्रीमद् गौरभक्तवृन्दे स्वीय-स्वीयगणान्विते ।
रूपस्वरूपप्रमुखे स्वगणस्थान् गुरुन् स्मरेत् ॥

अर्थ—स्व-स्व गणान्वित श्रीरूप और स्वरूपादि प्रमुख श्रीगौरभक्तवृन्द मध्य में निजगणस्थ श्रीगुरु, परमगुरु इत्यादि को साधक स्मरण करे।

ततः सिंहासनाधो वामपार्श्वे श्रीगुरुदेवं ध्यायेत् । यथा-यामले—

शुद्धस्वर्णरुचिं शुद्धभावभूषाकलेवरम् ।
सच्चिदानन्दसान्द्राङ्गं करुणामृतवर्षिणम् ॥
शशाङ्कायुतसङ्काशं वराभयलसत्करम् ।
शुक्लाम्बरधरं देवं शुक्लमाल्यानुलेपनम् ॥
शिष्यानुग्रहसंधानं स्मितनित्ययुताननम् ।
श्रीकृष्णप्रेमसेवादिदातारं दीनपालकम् ॥
समस्तमङ्गलाधारं सर्वानन्दमयं विभुम् ।
ध्यायन् श्रीगुरुदेवं तं परमानन्दमश्नुते ॥ इति ॥

अर्थ—सिंहासन के अधोदेश वामपार्श्व में अवस्थित श्रीगुरुदेव का ध्यान करे; यथा-जो शुद्ध स्वर्णकान्तियुक्त, शुद्धभाव से भूषित कलेवर, सच्चिदानन्द सान्द्राङ्ग, कृपामृतवर्षी, अयुतचन्द्रतुल्य सुशीतल और समुज्ज्वल, वराभयकर, शुक्लाम्बरधर, शुक्लमाला और अनुलेपन से भूषित, शिष्यानुग्रहयुक्त, नित्य

स्मितशोभितानन, कृष्णप्रेमसेवादिदाता, दीनपालक, सर्वमङ्गलाधार, सर्वानन्दमय, और विभु है, उन श्रीगुरुदेव को ध्यान करके साधक परमानन्द प्राप्त करे।

तत्पादपद्मसंविधे सेवोत्सुकमात्मानञ्च भावयेत्—

दिव्यश्रीहरिमन्दिराढ्यमलिकं कण्ठं सुमालान्वितम्
वक्षः श्रीहरिनामवर्णसुभगं श्रीखण्डलिप्तं पुनः।
शुभ्रं सूक्ष्मनवाम्बरं विमलतां नित्यं वहन्तीं तनुम्
ध्यायेत् श्रीगुरुपादपद्मनिकटे सेवोत्सुकञ्चात्मनः।इति

अर्थ—साधक श्रीगुरुपादपद्मनिकट में अपने को सेवोत्सुकरूप भावना करे, यथा-ललाट पर श्रीहरिमन्दिर, कण्ठ में सुमाला, वक्षस्थल पर सुन्दरश्रीहरिनामाक्षर और प्रसादी चन्दन, अङ्ग में सूक्ष्म नवाम्बरधारण, इस प्रकार निज सुविमलतनु को श्रीगुरुपादपद्म के निकट सेवोत्सुकहोकर ध्यान करनाचाहिए।

१०। अथ श्रीगुरुपूजाविधिः–तन्मन्त्रेणैव सर्व्वं कुर्यात्। तद् यथा–"एतत् पाद्यम्; एष प्रसादीगन्धः; एतत् प्रसादी पुष्पम्; एष प्रसादीधूपः; एष प्रसादी दीपः; एतत् प्रसादीनैवेद्यम्; एतत् प्रसादी पानीय जलम्; इदमाचमनीयम्; एतत् प्रसादी ताम्बुलम्; एतत् प्रसादी गन्ध-माल्यम्; एष प्रसादी पुष्पाञ्जलिः" इति। ततः प्रार्थना यथा–हे श्रीगुरो भुवनमङ्गलनामधेय, ध्येयाङ्घ्रिपद्ममृषिभिः शरणं निजस्वम्। दीनाय मे दय दयासरितां पते श्रीकृष्णाङ्घ्रिपद्मभजनं सुलभं यदस्तु ॥ इति। ततस्तन्मन्त्रंजप्त्वा तद्‌गायत्रीं स्मरेत्। ततः श्रीकृष्णचैतन्यं ध्यायेत्।

अर्थ-अनन्तर श्रीगुरुपूजाविधि लिखते हैं–श्रीगुरुमन्त्र से ही सर्वोपचार प्रदान पूर्वक श्रीगुरुदेव की मानस और वाह्य पूजा करे, अर्थात् उनके मन्त्रोच्चारण पूर्वक "एतत् पाद्यं श्रीगुरवे नमः" इसप्रकार एक-एक करके सर्वोपचार उनको अर्पण करे। पाद्य भिन्न गन्ध प्रभृति उपचार प्रसादी रूप से कहे जाते हैं, एवं श्रीभगवत्पूजा के पूर्व श्रीगुरुपूजा का विधान है। अर्थात् प्रथम प्रसादी गन्धादि के द्वारा श्रीगुरुपूजा करनी चाहिए। अनन्तर प्रार्थना यथा—हे भुवनमङ्गलनामधेय श्रीगुरो! ऋषिगण कर्त्तृक ध्येय आपके चरणपद्म मेरे लिए एकमात्र शरण्य एवं स्वीय हैं, मैं दीन हूँ, मेरे प्रति दया करो। हे दयासागर! आपकी दया से श्रीकृष्णभजन सुलभ हो। इसप्रकार प्रार्थना करके श्रीगुरुमन्त्रजपपूर्वक तदीय गायत्री स्मरण करे, तदनन्तर श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु का ध्यान करे।

११। यथा—श्रीमन्मौक्तिकदामवद्धचिकुरं सुस्मेरचन्द्राननम्
श्रीखण्डागुरुचारुचित्रवसनं स्रग्दिव्यभूषाश्रितम्।
नृत्यावेशरसानुमोदमधुरं कन्दर्पवेशोज्ज्वलं
चैतन्यं कनकद्युतिं निजजनैः संसेव्यमानं भजे ॥

ततस्तं पूजयेत् "एतत् पाद्यमित्यादि प्रत्येकमुक्त्वा श्रीकृष्ण-चैतन्यचन्द्राय नमः" इति मन्त्रेण।

अर्थ—सुन्दर मुक्तामाला से जिनके केश निबन्ध हैं, जिनके वदनचन्द्र में सुमृदु हास्यसुधा और श्रीअङ्ग में चन्दनागुरुचर्च्चा एवं चित्रवसन सुशोभित हैं, जो माला एवं दिव्यभूषा से विभूषित एवं नृत्यावेश रसानन्द में मधुर है, कन्दर्प सदृश समुज्ज्वल वेश है, जो निज जनगण कर्त्तृक संसेव्यमान हैं, उन कनक-कान्ति श्रीचैतन्यचन्द्र का मैं भजन करता हूँ। इस प्रकार ध्यान करके पूजा करे—"एतत् पाद्यं" इत्यादि उपचार का नामोल्लेख करके "श्रीकृष्णचैतन्य-चन्द्राय नमः" इस मन्त्र से समर्पण करे। अर्थात् श्रीमन्महाप्रभु के मन्त्रो-च्चारण सहित "एतत् पाद्यं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" कहकर श्रीचरणों को लक्ष्य करके पाद्य अर्पण करना चाहिए।

उपचार प्रयोग विषय में इस स्थानपर कुछ ज्ञातव्य —श्रीहरिभक्तिविलास में और तन्त्रसारादि शास्त्रों में हम देख सकते है,—पाद्यं ..नमः, अर्घ्यं... स्वाहा, आचमनीयं...स्वधा, मधुपर्कं...स्वधा, पुनराचमनीयं...स्वधा, स्नानीयं ...निवेदयामि, वस्त्रं ...निवेदयामि, आभरणं.. निवेदयामि, गन्धः....नमः, पुष्पाणि...वौषट्, पुष्पाञ्जलिः...वौषट्, धूपः...नमः, दीपः...नमः, नैवेद्यं... निवेदयामि, पानीयं...निवेदयामि, ताम्बुलं...निवेदयामि। इस प्रकार उपचारों से नमः आदि शब्द प्रयोग होने पर भी नमः आदि शब्द अर्थात् नमः, स्वाहा, स्वधाः निवेदयामि एवं वौषट शब्दों का एक ही अर्थ अर्थात् देवता उद्देश्य से ही उपचार निवेदन वा समर्पण अर्थ को कहते हैं। इस कारण से ग्रन्थकार श्रीसिद्धवावा केवल "नमः" शब्द प्रयोग करके ही सर्वोपचार समर्पण करने का उल्लेख किये है। रागानुगार्चन में केवल विधि एवं विशेष नियमादि की अपेक्षा नहीं की जाती है यह जानना चाहिए। श्रीपाद ध्यानचन्द्र गोस्वामी प्रभु ने भी निज पद्धति में (श्रीमन्महाप्रभु की पूजा प्रसङ्ग में) उल्लेख किये है—श्रीगुरोरा-ज्ञया श्रीमन्महाप्रभुं षोड़शोपचारादिभिः तन्मूलमन्त्रेणैव पूजयेत् अर्थात् साधक ध्यानानन्तर श्रीगुरुदेव की आज्ञा से श्रीमन्महाप्रभु की तदीय मूल मन्त्र से षोड़शोपचारादि देकर पूजा करे। इस प्रकार कहकर श्रीमन्महाप्रभु का मन्त्रो-ल्लेख करके कतिपय उपचारों का नामोल्लेख किये हैं—"एतत् पाद्यं' एतत्

अर्घ्यं, एतदाचमनीयं, एष गन्धः, एतत्पुष्पं, एष धूपः, एष दीप, एतन्नैवेद्यं, एतत् पानीजलं, इदमाचमनीयं, एतत्ताम्बुलं, एतत् गन्धमाल्यं, एष पुष्पाञ्जलिः" इत्यादि। श्रीनित्यानन्दप्रभु प्रभृति की इसी प्रकार पूजा करे अर्थात् उनके मन्त्र से इसी प्रकार पाद्यादि उपचार पूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए। श्रीसिद्ध-वावाने भी इसी प्रकार से उल्लेख किया है-एतत् पाद्यं इत्यादि प्रत्येक उपचार "श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" इस मन्त्र से समर्पण करे। अर्घ्यादि प्रयोग में यथा—श्रीमन्महाप्रभु के मन्त्रोच्चारणपूर्वक "एतदर्घ्यं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" कहकर श्रीचरणों में तुलसी संयुक्त अर्घ्य देना चाहिए। साधारण विधि से शिरोदेश पर अर्घ्यार्पित होता है। श्रीमन्महाप्रभुप्रभृति की पूजा विधि असाधारण माननी चाहिए। श्रीअद्वैतप्रभुने श्रीगौराङ्ग के श्रीचरणों में अर्घ्यार्पण कियाथा यथा—

चन्दने डुबाइ दिव्य तुलसी मञ्जरी।
अर्घ्येर सहित दिला चरण उपरि ॥ चैः भाः मः ६ ॥

पाद्यादि प्रत्येक उपचार के साथ तुलसी देकर समर्पण करने की विधि है। "विना तुलसी प्रभु एक नाइ मानि" इत्यादि प्रमाण से तुलसी व्यतिरेक से श्रीभगवान् एक भी उपचार ग्रहण नहीं करते हैं, यह जानना चाहिए।

श्रीहरिभक्तिविलास में ५। २५ श्लोक में पाद्यपात्र में दूर्वा, पद्म, विष्णुपत्नी (तुलसी) और श्यामाधान देने का विधान है। अर्घ्यपात्र में तिल, जव, श्वेतसर्षप कुशाग्र, गन्ध और पुष्प इनके साथ तुलसी भी दे। किन्तु अक्षत नही देना चाहिए। आचमन पात्र में लवङ्ग, जातिफल और कक्कोल दे। मधुपर्कपात्र में दुग्ध-दधि घृत, मधु, और खण्डद्रव्य देना चाहिए। इन सव पदार्थों के अभाव में अथवा किसी पदार्थ के अभाव होने पर तत्परिवर्त्तन में पुष्प और तुलसी देना चाहिए। पुष्प के अभाव में केवल तुलसी देकर ही उपचार पूर्ण करे।

अन्यान्य उपचार प्रयोग यथा—मन्त्रोच्चारण सहित—"एतदाचमनीयं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" बोलकर दक्षिणहस्थ को लक्ष्य करके आचमन देवे। मन्त्रोच्चारण सह "एष गन्धः श्रीकृष्णचैतन्य चन्द्राय नमः" कहकर चन्दनागुरु कर्पूरयुक्त गन्ध तुलसीपत्र श्रीअङ्ग में लेपन करे। मन्त्रोच्चारण सह प्रत्येक उपचार देना चाहिए। तुलसी और पुष्प 'श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्रायनमः' कहकर श्रीचरणों में अर्पणकरे। एतत् सचन्दनतुलसीपत्रं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः बोलकर श्रीचरणों में अष्टदलतुलसी अर्पण करे।

धूपार्पण—तैजसादि पात्रास्थित उत्तम काष्ठाङ्गाराग्नि में गुग्गुल, शर्करा-घृत, मधु और चन्दन मिश्रित धूप निक्षेप करके धूपाधार पर तुलसी संयोगपूर्वक "एष धूपो नमः" कहकर जल द्वारा उत्सर्ग करे। पश्चात्—(वनस्पति-श्लोक-

वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।

आघ्रेयः सर्व्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ह०भ०वि० ॥

अर्थ—"तरुरस से समुत्पन्न उत्तमगन्ध देवगण के आघ्राणोपयुक्त इस धूप को ग्रहण करो । इस मन्त्र का पाठ करके श्रीमन्महाप्रभु के मन्त्रोच्चारण सहित "एष धूपः श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" कहकर वामहस्त से घण्टावाद्य के साथ नामकीर्त्तन करते-करते भूतल से लेकर प्रभु के नाभिदेश पर्यन्त धूप पात्र उठाकर अर्पण करे।

दीपार्पण-धूपार्पण के समान दीपार्पण करना चाहिए । शक्ति अनुसार कर्पूर गोघृत सह विषमवर्तिकायुक्त दीप प्रज्ज्वालित करना चाहिए । इससे भी असमर्थ होनेपर सुगन्धिततेल के द्वारा दीपप्रज्ज्वालित करे । दीपदानमन्त्र यथा—ह भ वि:

सुप्रकाशो महातेजाः सर्व्वतस्तिमिरापहः ।

सवाह्याभ्यन्तरज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

अर्थ—सुप्रकाश, महातेजा, यावतीय तिमिरहारक एवं वाह्याभ्यन्तरज्योति-सम्पन्न इस दीप को ग्रहण करो । श्रीमूर्त्ति के पादाब्ज से प्रारम्भ करके नेत्राब्ज पर्यन्त नीराजनवत् प्रदीप घुमाना चाहिए अर्थात् श्रीचरणों में एकवार, नाभि-देशमें दोवार, श्रीमुखमण्डलपर एकवार और सर्वाङ्गमें सातवारघुमाना चाहिए।

नैवेद्यार्पण--श्रीहरिभक्तिविलासानुसार--पुष्पाञ्जलि, आसन, पाद्य और आचमनीय अर्पणान्त में नैवेद्य की रचना करनी चाहिए। उसमें तुलसीपत्र संयोग करके नैवेद्य को अमृतमय चिंताकरे। "अस्त्राय फट्" मंत्र के द्वारा जल प्रोक्षण पूर्वक चक्रमुद्रा भ्रमण के द्वारा रक्षा करे। पश्चात् वायुवीज(यं) दशवार जल में जप करते हुए उसी जल से नैवेद्य को प्रोक्षण करना चाहिए । इससे नैवेद्य द्रव्य का शुष्कत्व दोष शोषण होता है । दक्षिण कर में वह्निवीज (रं) की चिंता करे एवं दक्षिण करतल के पृष्ठ पर वाम करतल संलग्न कर प्रदर्शन करे । उससे उत्थित वह्निद्वारा नैवेद्य द्रव्य का शुष्कत्वदोष मन ही मन दहन करना चाहिए। उसके पश्चात् वाम करतल पर अमृत वीज (ठं) को चिंताकरे, अनन्तर बामहस्त के पृष्ठभागपर दक्षिणकरतल संयोगकरके दिखाना चाहिए। उक्त मुद्रा से उत्पन्न सुधाधारा द्वारा नैवेद्य सिक्त हो, ऐसी भावना करना चाहिए। पश्चात् मूलमन्त्र के योग से अभिमन्त्रित जल के द्वारा इस नैवेद्य को प्रोक्षणकर तत्समस्त का सुधामय चिन्ता करे । उसकेबाद दक्षिण हस्त द्वारा स्पर्श पूर्वक अष्टवार मूलमन्त्र का जपकरे । पश्चात् धेनुमुद्रा के योग से उक्त नैवेद्य को परिपूर्ण अमृतरूप समझकर एवं जल, गन्ध, पुष्प द्वारा इस नैवेद्य को (श्रीकृष्णाय नमः) बोलकर श्रीकृष्ण की पूजा करे । अनन्तर वाम हस्त से

नैवेद्यपात्र को स्पर्श करके दक्षिण हस्त में गन्ध-पुष्प सह जल लेकर स्वाहान्त मूल मन्त्र पाठकर (श्रीकृष्णाय इदं नैवेद्यं कल्पयामि) कहकर गन्ध-पुष्पादिसह दक्षिण करस्थ जल को भूतल पर परित्याग करना चाहिए। तदनन्तर तुलसी-पत्र युक्त इस नैवेद्यपात्रको दोनों हाथों से धारणपूर्वक भूतल से उठाकर निवेदन मन्त्र के द्वारा भक्तिपूर्वक प्रभु को निवेदन करे। यथा--

"निवेदयामि भवते जुषाणेदं हविर्हरे।"

अर्थ—हे भगवन्! यह हविः आपको निवेदन करता हूँ, आप ग्रहण करें। पश्चात् "अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा" मन्त्र से श्रीप्रभु के कर में जलगण्डुष प्रदान करके वामहस्त से विकसितकमल सदृश ग्रासमुद्रा प्रदर्शन करे एवं दक्षिण हस्त से "ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा" यथाक्रम से प्राणादि पञ्चमुद्रा प्रदान करनी चाहिए। पञ्चमुद्रा प्रदर्शन यथा—कनिष्ठा और अनामिका अङ्गुलद्वय अङ्गुष्ठ के ऊर्द्धभाग को स्पर्श करे तो वह प्राणमुद्रा होती है। इसी प्रकार तर्जनी और मध्यमा उसी अङ्गुष्ठ के ऊर्द्धभाग को स्पर्श करे तो वह अपान मुद्रा, अनामिका और मध्यमा को उसी प्रकार अङ्गुष्ठ के ऊर्द्धभाग को स्पर्शकरे तो व्यान मुद्रा, अनामिका तर्जनी और मध्यमा को उसीप्रकार स्पर्शकरनेपर उदानमुद्रा,अनामिका मध्यमा,तर्जनी और कनिष्ठा ये चार अङ्गुलियाँ उसी प्रकार अङ्गुष्ठ के ऊर्द्धभाग को स्पर्श करे तो समान मुद्रा होती है। तदनन्तर करद्वय के वृद्धाङ्गुष्ठ के द्वारा स्व-स्व अनामिका युगल को स्पर्श करनेपर नैवेद्यमुद्रा कही जाती है। इसी नैवेद्यमुद्रा को दिखाकर नैवेद्य द्रव्य का मन्त्र जप करे। भक्तितत्पर व्यक्तिगण निज अभीष्ट मन्त्र को नैवेद्य पदार्थ के मन्त्ररूप से जपकरे एवं ग्रासमुद्रा प्रदर्शनकरे। नैवेद्य अर्पण की यह सम्पूर्ण विधि प्रदर्शित की गई। श्रीकृष्ण पूजा के लिए श्रीकृष्ण मन्त्र मूलमन्त्र नाम से अभिहित होने परभी श्रीमन्महाप्रभु की पूजा के लिए तदीय मन्त्र भी मूलमन्त्र नाम से कथित होता है। जिनमूर्त्ति की पूजा विधेय है, तत्तन्मन्त्र ही तत्तत् पूजा के लिए तत्तन्मूल मन्त्ररूप से अभिहित होता है, यह जानना चाहिए। उक्त विधि से श्रीमन्महाप्रभु के तत्तन्मूलमन्त्रोच्चारण सह "एतन्नैवेद्यं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" कहकर नैवेद्य अर्पण करे। मन्त्रोच्चारण करके "एतद् पानीयोदकं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" बोलकर पानीयोदक समर्पण करे भोजन चिंताकर पश्चात् यथा समय "इदमाचमनीयं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः" कहकर आचमन प्रदान करे। "एतत् ताम्बुलं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः, एतत् गन्धमाल्यं श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः, एष पुष्पाञ्जलिः श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्राय नमः, बोलकर क्रमपूर्वक ताम्बुल, गन्धमाल्य और पुष्पाञ्जलि अर्पण करे। षोड़शोपचार अथवा दशोपचार से पूजन करना

कर्त्तव्य है। असमर्थ होने पर पञ्चोपचार से पूजन कर्त्तव्य है। षोड़शोपचार-आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य आचमनीय, मधुपर्क, पुनराचमनीय, स्नानवसन, आभरण, गन्ध पुष्प, धूप,दीप, नैवेद्य एवं ताम्बुल है। दशोपचार यथा-पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्क पुनराचमनीय, गन्ध-पुष्प धूप-दीप और नैवेद्य है। पञ्चोपचार यथा-गन्ध, पुष्प,धूपदीप और नैवेद्य है। दशोपचार से स्नानादि और पञ्चोपचार से स्नानाचमनादि नहीं होनेपर भी शिष्टाचारानुसार से उसे सकलोपचार विहित जानना चाहिए। पुष्पार्पण के पूर्व भी तुलसी अर्पण करना चाहिए।

श्रीनृसिंहपरिचर्याग्रन्थ में पुष्पार्पण के पूर्व तुलसी अर्पण का विधान है। तुलसीपत्र संलग्न चन्दनार्पण के अनन्तर सुकोमला तुलसीमञ्जरी द्वारा महापूजा विधानहै, यथा-अथ सुकोमलदलरूपया मञ्जरीरूपया तुलस्या महापूजां कुर्यात्। अर्थात् १०।१५ अनुच्छेद में पुष्पार्पण का विधान है, अथ पुष्प पूजां कुर्यात्। अर्थात् तुलसी अर्पण के वाद पुष्पार्पण करे। श्रीविग्रह को शय्या से उठाकर श्रीचरणों में तुलसी अर्पण का भी ६।२ अनुच्छेद में विधान किया गया है— देवस्य तुलसीवर्ज्जं निर्माल्यापसार्य्य करचरणवदनक्षालनपुरःसरं पतद्ग्राहे गण्डुषाणि दत्त्वा तुलसीं समर्प्य......। अर्थात् श्रीविग्रह को उठाकर तुलसी भिन्न निर्माल्य अपसारण कर करचरण और मुख प्रक्षालन के लिए पतद्ग्राह (पीकदानी अथवा प्रक्षालनपात्र) में जल गण्डुष प्रदानकर श्रीचरणों में तुलसी दे। श्रीसिद्धवावा भी प्रथम युगलमूर्ति के उत्थान समय में श्रीचरणों में तुलसी अर्पण का उल्लेख किए हैं। स्नानपात्र में तुलसी पत्रासनपर युगलमूर्त्ति का संस्थापन, तुलसीपत्रयुक्त शङ्खोदक स्नान, स्नानान्त में तुलसी अर्पण करे। पश्चात् गन्ध-माल्यादि अर्पण करे। श्रीविग्रह के श्रीचरणों में उत्थानादि सर्व-काल में तुलसी अर्पण कियाजाता है। किसीसमय में भी श्रीचरण से श्रीतुलसी जी का विरह नहीं होना चाहिए। श्रीमन्महाप्रभु की पूजाविधि पहले लिखी गई है। उसी प्रकार श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत, श्रीकृष्ण और श्रीराधाजी की पूजाविधि जाननी चाहिए।

१२। श्रीनित्यानन्दप्रभोर्ध्यानम्—

कुञ्जरेन्द्रविनिन्दिसुन्दरगति-श्रीपादमिन्दीवर—
श्रेणीश्यामसदम्बरं तनुरुचा सान्ध्येन्दुसंमर्द्दकम्।
प्रेम्णा घूर्णसुकञ्जखञ्जनमदाजिन्ने त्रहास्याननं
नित्यानन्दमहं स्मरामि सततं भूषोज्ज्वलाङ्गश्रियम्॥

ततस्तं पूजयेत्;—एतत् पाद्यमित्यादि प्रत्येकमुक्त्वा—

"श्रीनित्यानन्दचन्द्राय नमः" इतिमन्त्रेण ।

अर्थ—श्रीनित्यानन्दप्रभु का ध्यान—जिनके गतिशील श्रीचरण श्रेष्ठ गजगति की निन्दा करते हैं, जिनके श्रीअङ्ग में इन्दीवर श्रेणी सदृश नीलाम्बर सुशोभित है, जिनकी तनुकान्ति संध्याकालीन पूर्णेन्दु को सम्मर्दनकरती हैं, जिनके प्रेमघूर्णन नेत्रयुगल सुकञ्ज और खञ्जन के गर्व को पराभूत करती हैं । जिनका हास्यवदन माधुर्य से सुशोभित एवं भूषणों से उज्ज्वल-अङ्ग विभूषित हैं, उन श्रीनित्यानन्दप्रभु को मैं निरन्तर स्मरण करता हूँ । अनन्तर उनकी पूजा करे। "एतत् पाद्यं" इत्यादि प्रत्येक उपचार का उल्लेख करके "श्रीनित्यानन्दचन्द्राय नमः" इस मन्त्र से समर्पणकरे । अर्थात् श्रीनित्यानन्दप्रभु के मन्त्रोच्चारण सह "एतत् पाद्यं" श्रीनित्यानन्दचन्द्राय नमः कहकर श्रीचरणों को लक्ष्य कर पाद्य अर्पण करे । इसीप्रकार प्रत्येक उपचार समर्पण करे ।

१३ । श्रीमदद्वैतप्रभोर्ध्यानम् ; यथा—

सद्भक्तालि-निषेविताङ्घ्रिकमलं कुन्देन्दु शुक्लाम्बरं
शुद्धस्वर्णरुचिं सुवाहुयुगलं स्मेराननं सुन्दरम् ।
श्रीचैतन्यदृशं वराभयकरं प्रेमाङ्गभूषाश्रित-
मद्वैतं सततं स्मरामि परमानन्दैककन्दं प्रभुम् ॥ इति ॥

ततस्तं पूजयेत् ;—एतत् पाद्यमित्यादिप्रत्येकमुक्त्वा "श्रीअद्वैतचन्द्राय नमः" इतिमन्त्रेण । ततस्तुलसीपत्राणि च श्रीप्रभुभ्यः समर्पयेत् ।

अर्थ—श्रीअद्वैतप्रभु का ध्यान ; यथा—जिनके पदकमल भक्तगणके द्वारा निषेवित होते हैं, जो कुन्देन्दुवत् शुक्ल वस्त्रधारी हैं, जो शुद्ध स्वर्णकान्ति व सुवाहुयुगल से सुशोभित हैं, जो स्मेरानन सुन्दर हैं, जिनकी दृष्टि श्रीचैतन्यमहाप्रभु के प्रति विराजितहै, जो वराभयकर और प्रेमरूप अङ्गभूषा से विभूषित है, उन परमानन्दकन्द श्रीअद्वैत प्रभु को सर्वदा स्मरण करता हूँ ।

ध्यानानन्तर उनकी पूजा करे ; यथा-"एतत् पाद्यं" इत्यादि प्रत्येक उपचार का नाम उल्लेखकरके "श्रीअद्वैतचन्द्रायनमः" इसमन्त्र से समर्पणकरे । अर्थात् श्रीअद्वैतप्रभु के मन्त्रोच्चारणसहित पाद्यादि प्रत्येक उपचारका नामग्रहण कर "श्रीअद्वैतचन्द्राय नमः" कहकर निवेदन करे । तत्पश्चात् तीनों प्रभु के श्रीचरणकमलों में तुलसीपत्रावली समर्पण करे ।

१४ । ततः श्रीगदाधरस्य ध्यानम् ; यथा—

कारुण्यैकमरन्दपद्मचरणं चैतन्यचन्द्रद्युतिम्
ताम्बुलार्पणभङ्गि दक्षिणकरं श्वेताम्बरं सद्वरम् ।

प्रेमानन्दतनुं सुधास्मितमुखं श्रीगौरचन्द्रेक्षणम्
ध्यायेच्छ्रीलगदाधरं द्विजवरं माधुर्य्यभूषोज्ज्वलम् ॥ इति ॥

ततः श्रीमहाप्रभोः प्रसादनिर्म्माल्यादिना श्रीगदाधरस्य श्रीश्रीवासा-दीनाञ्च पूजा कर्त्तव्या । ततः श्रीगदाधरस्य पूजा यथा ;—एतत् पाद्यं एष प्रसादो गन्ध इत्यादि प्रत्येकमुक्त्वा "श्रीगदाधराय नमः" इति मन्त्रेण ।

अर्थ—तत्पश्चात् श्रील गदाधर पण्डित गोस्वामी का ध्यान करे । यथा-जिनके पद्मचरण कारुण्यमकरन्द से पूर्ण, जिनका वर्ण चैतन्यचन्द्रद्युतितुल्य है, श्रीचैतन्यमुख में ताम्बुलार्पण करने में जिनका दक्षिणहस्त भङ्गियुक्त है, जो श्वेताम्वरधारी, साधुश्रेष्ठ, प्रेमानन्द विग्रह और सुधास्मितमुख है, श्रीगौर-रूप दर्शन में जिनके नेत्र समासक्त है, माधुर्यभूषा से विभूषित उन द्विजवर श्रीगदाधर का ध्यान करता हूँ । तत्पश्चात् श्रीमहाप्रभु के प्रसाद निर्म्माल्यादि द्वारा श्रीगदाधर और श्रीवासादि की पूजा करे । श्रीगदाधर की पूजा यथा— (मन्त्रोच्चारण पूर्वक) एतत् पाद्यं, एष प्रसादि गन्ध इत्यादि प्रत्येक प्रसादो उपचार द्रव्य का नामग्रहण पूर्वक "श्रीगदाधराय नमः" कहकर समर्पण करे ।

१५ । ततः श्रीवासादीनां ध्यानं ; यथा—

ये चैतन्यपदारविन्दमधुपाः सत्प्रेमभूषोज्ज्वलाः
शुद्धस्वर्णरुचो दृगम्बुपुलकस्वेदैः सदङ्गश्रियः ।
सेवोपायनपाणयः स्मितमुखाः शुक्लाम्बराः सद्वराः
श्रीवासादिमहाशयान् सुखमयान् ध्यायेम् तान् पार्षदान् ॥

ततः प्रसादैस्तेषां पूजा यथा ;-एष प्रसादो गन्ध इत्यादि प्रत्येकमुक्त्वा 'श्रीश्रीवासादिभ्यो नमः' इति मन्त्रेण । ततः आरात्रिकं पूर्ववत् कुर्य्याद् ।

अर्थ-जो श्रीचैतन्यपदकमलमधुप, सत्प्रेमभूषा से उज्ज्वल और शुद्ध स्वर्ण-वर्ण हैं, अश्रु, पुलक और स्वेद से जिनके अङ्ग सुशोभित हैं, हस्त सेवोपयन युक्त एवं मुखपर मृदुहास्य विराजित है, एवम्भूत साधुश्रेष्ठ, शुक्लाम्बरधारी, उन सुखमय श्रीवासादि पार्षदगण का ध्यान करता हूँ । तत्पश्चात् प्रसादी से उनकी पूजा करनी चाहिए; यथा—एष प्रसादी गन्ध इत्यादि प्रत्येक प्रसादी द्रव्य का नामोल्लेख करके "श्रीश्रीवासादिभ्यो नमः" इस मन्त्र से समर्पण करे । तत्-पश्चात् पूर्ववत् आरती करे ।

१६। ततः मस्तकाञ्जलिर्भूत्वा संक्षेपेण श्रीगुर्व्वादीन् प्रणमेत्, यथा-

गुरूणां पादाब्जान्यखिलसुखसद्मानि नितरां
प्रभुं नित्यानन्दं कनकरुचिकृष्णं सुरनदीम्।
नमाम्यद्वैतं माधवतनयमाह्लादवपुषं
नवद्वीपं श्रीवासमुखरसभक्तान् स्वशिरसा॥ इति॥

तथा प्रार्थना—प्रसीद श्रीनवद्वीप श्रीगङ्गे श्रीगुरो हरे।
श्रीचैतन्यप्रभो नित्यानन्दाद्वैत कृपार्णव॥

हे श्रीगदाधर! शचीसुतहार्दपात्र!
गान्धर्व्विकासुखतनो रससारगात्र!
मां ते पदाब्जरजसा सदृशं विभाव्य
कीर्त्ति प्रचारय निजां कुशलैर्विभाव्य॥

कल्पागा अमृताम्बुधेर्झषवराः प्रेमाम्बुधेश्चातका
मेघस्यामृतपायिनो वरविधोः पद्मानि चण्डत्विषः।
भृङ्गाः पद्मवनस्य नाकसदना विष्णोर्महान्तो हि ते
भक्ता गौरहरेः परं मयि कृपां कुर्व्वन्त्वनन्यगतौ॥ इति।

अर्थ—तदनन्तर मस्तक पर अञ्जलि रखकर श्रीगुरु प्रभृति को प्रणाम करे; यथा—अखिलानन्द के सद्मस्वरूप श्रीगुरुगण के पादपद्म, एवं श्रीगौर, श्री-नित्यानन्द, श्रीअद्वैत, श्रीगङ्गा, आनन्द विग्रह श्रीगदाधर, नवद्वीप और श्री-वासप्रमुख रसमय भक्तगण को मस्तक से प्रणाम करता हूँ। प्रार्थना भी करे-हे श्रीनवद्वीप, हे श्रीगङ्गे, हे श्रीगुरो हरे, हे श्रीचैतन्यप्रभो, हे कृपार्णव श्री-नित्यानन्दाद्वैत! हमारे प्रति प्रसन्न होओ। हे शचीसुत प्रीतिपात्र श्रीगदाधर! गान्धर्विका सुखतनु, रसमयगात्र! पण्डितगण आपके चरणों को चिन्ता करते हैं, मुझको निज पदाब्ज धूलि सदृश भावना कर अपनी कीर्त्ति प्रचार करो। हे गौरभक्तवृन्द! आप सब अमृतसागर के कल्पवृक्ष व प्रेमसमुद्र के श्रेष्ठ मत्स्य सदृश हैं, माधुर्य्यमेघ के प्रिय चातक हैं, प्रेमचन्द्र के सुधापायी चकोर हैं, संकीर्त्तन-सूर्य्य के प्रिय पद्मवृन्द हैं, भावपद्मवन की भृङ्गावली और श्रीविष्णु के वैकुण्ठ भवन सदृश है, हे महान्तगण! मैं अनन्यगति हूँ आप मुझपर कृपा करें।

१७। ततश्च श्रीगुरोराज्ञां गृहीत्वा श्रीवृन्दावनमध्ये श्रीराधा-कृष्णपरिजनमध्ये विराजमानां श्रीगुरुदेवीं ध्यात्वात्मानं तद्दासीरूपां

भावयेत् । तत्रादौ श्रीगुरोः प्रार्थना ; यथा यामले—

त्वं गोपिका वृषरवेस्तनयान्तिकेऽसि
सेवाधिकारिणि गुरो निजपादपद्मे ।
दास्यं प्रदाय कुरु मां व्रजकानने हि
राधाङ्घ्रिसेवनरसे सुखिनीं सुखाब्धे ।। इति ।।

अर्थ—अनन्तर श्रीगुरुदेव की आज्ञा ग्रहण करके श्रीवृन्दावन में श्रीराधा-कृष्ण के परिजनों के मध्य में विराजमाना श्रीगुरुदेवी का ध्यान करे एवं निज को तद्दासीरूप से भावना करे। ध्यान के पूर्व श्रीगुरुदेव के श्रीचरण में प्रार्थना यथा— हे गुरुदेव ! आप श्रीवृषभानुतनया के निकट गोपिकारूप से विराजमान हैं; मुझे सेवाधिकार दानकारी श्रीचरण में दास्यभक्ति देकर सुखसमुद्ररूप इस ब्रज वन में श्रीराधिका के पदसेवनरस देकर इस दासी को सुखी करें।

१८। ततस्तद्ध्यानम्—तत्पश्चात् गुरुदेवी (गुरुरूपा सखी) का ध्यान; यथा—कृपामरन्दसम्पूर्णां शुद्धस्वर्णलसद्रुचिम् ।

क्षीणमध्यां पृथुश्रोणीं कस्तुरीतिलकान्विताम् ।।
तुङ्गस्तनीं विधुमुखीं रत्नाभरणभूषिताम् ।
शोणान्तरीयचित्रेन्दुज्योत्स्नाम्बरविधारिणीम् ।।
हरिन्मणि-चित्र-स्वर्णचूड़िकां मधुरस्मिताम् ।
सीमन्तोपरि सद्रत्नामलकालिलसन्मुखीम् ।।
किशोरीं गोपिकां रम्यां राधिकाप्रीतिभूषणाम् ।
सुन्दरीं सुकुमाराङ्गीं गुरुं ध्यायेद् प्रयत्नतः ।। इति ।।

अर्थ—जो कृपामरन्द से पूर्ण, शुद्धस्वर्ण तुल्य कान्तिसम्पन्ना, क्षीणमध्या, पृथुनितम्बा, कस्तुरीतिलकान्विता, उच्चस्तनी, विधुमुखी, रत्नाभरणभूषिता, रक्तचित्रान्तरोय और ज्योत्स्ना तुल्य शुक्लाम्बर से आवृत, नीलमणि और स्वर्णनिर्मित चित्र चूड़ीधारिणी और मधुरस्मिता हैं। जिनको सीमन्त रत्न से शोभित है, अलकसमूह से वदन भी विमण्डित है, श्रीराधिका की प्रीति ही जिनका भूषण है, उन सुन्दरी सुकुमाराङ्गी रम्या किशोरी गोपिका श्रीगुरुदेवी का प्रयत्न सहित ध्यान करे।

१९। ततस्तन्मन्त्रं गायत्रीञ्च दशधा जपेत्। ततः आत्मनो ध्यानं यथा—श्रीगुरुदेवी के ध्यान के पश्चात् उनको मन्त्र और गायत्री

का दशवार जप करे, यथा—

श्रीगुरोश्चरणाम्भोजकृपासिक्तकलेवराम् ।
किशोरीं गोपवनितां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
पृथुतुङ्गकुचद्वन्द्वां चतुःषष्टिकलान्विताम् ।
रक्तचित्रान्तरीयामावृतशुक्लोत्तरीयकाम् ॥
स्वर्णचित्रारुणप्रान्तमुक्तादामसुकञ्चुलीम् ।
चन्दनागुरुकाश्मीरर्च्चिताङ्गीं मधुस्मिताम् ॥
सेवोपायननिर्म्माणकुशलां सेवनोत्सुकाम् ।
विनयादिगुणोपेतां श्रीराधाकरुणार्थिनीम् ॥
राधाकृष्णसुखामोदमात्रचेष्टां सुपद्मिनीम् ।
निगूढ़भावां गोविन्दे मदनानन्दमोहिनीम् ॥
नानारसकलालापशालिनीं दिव्यरूपिणीम् ।
सङ्गीतरससंजात-भावोल्लास भरान्विताम् ॥
तप्तकाञ्चनशुद्धाभां स्वसौख्यगन्धवर्ज्जिताम् ।
दिवानिशं मनोमध्ये द्वयोः प्रेमभराकुलाम् ।
एवमात्मानमनिशं भावयेत् भक्तिमाश्रितः ॥ इति ॥

अर्थ——श्रीगुरुपादपद्मकृपारस से सिक्तकलेवरा किशोरी, गोपवनिता, नानाविध भूषणभूषिता, स्थुलोच्चकुचयुग्मा चतुःषष्टिकलायुक्ता, रक्तचित्रान्तरीय और शुक्लोत्तरीय वस्त्र से आवृत है, प्रान्त में मुक्तादाम अथच स्वर्ण चित्रारुण वर्ण युक्त सुकञ्चुली वक्षस्थल पर विराजित है, चन्दनागुरु और कुंकुम अङ्ग में चर्च्चित है, सेवोपकरण निर्माण में कुशला, मधुस्मिता, सेवनोत्सुका, विनयादि गुणयुक्ता, राधाकृष्णकृपाप्रार्थिनी, राधाकृष्णसुखमात्रैकचेष्टा, सुपद्मिनी' गोविन्द में निगूढ़भावा, मदनानन्द मोहिनी, नानारसकलालाप में शोभना, दिव्यरूपिणी, सङ्गीतरस से संजात भावोल्लास से युक्ता, तप्तकाञ्चन-वर्णा, स्वात्मसुखगन्धवर्जिता है, सर्वदा मनोमध्य में विराजित युगल प्रेमातिशय से आकुला है' साधक भक्त इस प्रकार निज को सर्वदा चिन्तन करें ।

२० । अथ वृन्दावनध्यानम् (गौतमीयतन्त्रे ४)—

ततो वृन्दावनं ध्यायेत् परमानन्दवर्द्धनम् ।

सर्व्वर्त्तुकुसुमोपेतं पतत्रिगणनादितम् ॥
भ्रमद्भ्रमरझङ्कारमुखरीकृतदिङ्मुखम् ।
कालिन्दीजलकल्लोलसङ्गिमारुतसेवितम् ॥
नानापुष्पलतावद्धवृक्षषण्डैश्चमण्डितम् ।
कमलोत्पलकह्लारधूलिधूसरितान्तरम् ॥
तन्मध्ये रत्नभूमिश्च सूर्य्यायुतसमप्रभाम् ।
तत्र कल्पतरूद्यानं नियतं प्रेमवर्षिणम् ॥
माणिक्यशिखरालम्वि तन्मध्ये मणिमण्डपम् ।
नानारत्नगणैश्चित्रं सर्व्वर्त्तु सुविराजितम् ॥
नानारत्नलसच्चित्रवितानैरुपशोभितम् ।
रत्नतोरणगोपुरमाणिक्याच्छादनान्वितम् ॥
दिव्यस्वर्णमुक्ताभार-तारहारविराजितम् ।
कोटिसूर्य्यसमाभासं निर्म्मुक्तं षट्तरङ्गकैः ।
तन्मध्ये रत्नरचितं स्वर्णसिंहासनं महत् ॥ इति ॥

अर्थ--तदनन्तर परमानन्द वर्द्धनकारी श्रीवृन्दावन का ध्यान करे—षड़-ऋतुकुसुमों से पूर्ण, पक्षीगण के शब्दों से निनादित, भ्रमणशील भ्रमरगण की झङ्कार से जिसका दिङ्मुख मुखरित, यमुना के तरङ्गसङ्गी मारुत से सेवित, नानाविध पुष्पलता से आवद्ध वृक्षसमूह से विमण्डित है, कमल उत्पल और कह्लार के पराग से जिसका अन्तर धूसरित है, इस प्रकार श्रीवृन्दावन के मध्य में अयुत सूर्य्यसमप्रभा ब्रजभूमि विराजमान है। इस भूमि में सर्वदा प्रेमवर्षी कल्पतरु उद्यान हैं, तन्मध्ये माणिक्यशिखरालम्बि नानारत्नगण से चित्रित मणिमण्डप विद्यमान है, उसमें सर्वऋतु विराजित, नानारत्नोचित वहुचन्द्रातप से यह मण्डप सुशोभित है एवं नानारत्नतोरणमालायुक्त पुरद्वार सह माणिक्यावरण विशिष्ठ है, और दिव्य स्वर्णमुक्ता समूह रचित उत्कृष्ट हारावली विराजित है, कोटिसूर्य्यसम कान्ति व षट्तरङ्गों से विमुक्त है, अर्थात् चिद्रूप इस मण्डप के मध्य में रत्नरचित महत् सिंहासन विराजमान हैं।

२१। तन्मध्ये श्रीराधाकृष्णं ध्यायेत् । तत्र श्रीकृष्णध्यानम्, (पाद्मे पातालखण्डे ५०।३५—४३)—

पीताम्बरं घनश्यामं द्विभुजं वनमालिनम् ।

वर्हिबर्हकृतापीड़ं शशिकोटिनिभाननम् ॥
घूर्णायमाननयनं कर्णिकारावतंसिनम् ।
अभितश्चन्दनेनाथ मध्ये कुंकुमविन्दुना ॥
रचितं तिलकं भाले विभ्रतं मण्डलाकृति ।
तरुणादित्यसङ्काशकुण्डलाभ्यां विराजितम् ॥
घर्म्माम्बुकणिकाराजद्दर्पणाभकपोलकम् ।
प्रियामुखार्पितापाङ्गलीलया चोन्नतभ्रुवम् ॥
अग्रभागन्यस्तमुक्ता-स्फुरदुच्चसुनासिकम् ।
दशनज्योत्स्नया राजत्पक्वविम्वफलाधरम् ॥
केयूराङ्गद-सद्रत्नमुद्रिकाभिर्लसत्करम् ।
विभ्रतं मुरलीं वामे पाणौ पद्मं तथोत्तरे ॥
काञ्चिदामस्फुरन्मध्यं नूपुराभ्यां लसत्पदम् ।
रतिकेलिरसावेशचपलं चञ्चलेक्षणम् ।
हसन्तं प्रियया सार्द्धं हासयन्तञ्च तां मुहुः ॥
इत्थं कल्पतरो मूले रत्नसिंहासनोपरि ।
वृन्दावने स्मरेत् कृष्णं सुस्थितं प्रियया सह ॥ इति ॥

अर्थ—इस प्रकार सिंहासन के मध्य में श्रीराधाकृष्ण का ध्यान करे। श्रीकृष्ण ध्यान यथा—जो पीताम्बर, घनश्याम, द्विभुज, वनमाली, मयूर-पिञ्छावतंस और कोटिचन्द्रानन हैं, जिनके नयन घूर्णायमान होते रहते हैं, कर्णिका के पुष्परचित कर्णभूषण से एवं ललाटस्थ चन्दनविन्दु वेष्टित कुंकुम-विन्दु रचित मण्डलाकृति तिलक से और कर्णमूलधृत तरुणादित्यतुल्य कुण्डल युगल से जो सुशोभित होकर विराजित हैं, जिनके दर्पणतुल्य कपोलपर घर्मजल कणिका शोभा पाती हैं, प्रियामुखार्पित नेत्रप्रान्त की लीला से जिनका भ्रू युगल उन्नत है, अग्रभागन्यस्तमुक्ता को कान्ति से शोभित सुनासिका है, दन्तज्योत्स्ना से पक्वविम्वफलवत् अधर एवं केयूराङ्गद और सुरत्नमुद्रिका से करयुगल सुशोभित है। जिनके वामहस्त में मुरली और दक्षिण हस्त में लीलापद्म सुशोभित है, जिनका कटिदेश काञ्चिदाम से और चरणयुगल नुपुरों से शोभित है, जो रतिकेलिरसावेश में चपल और चञ्चलेक्षण है, एवं श्रीराधा के सहित हँसते हैं और उनको भी हँसाते हैं ; इस प्रकार वृन्दावन के मध्य में कल्पवृक्ष के मूल में रत्नसिंहासनोपरि श्रीराधा के सहित सुस्थित श्रीकृष्ण का स्मरण करे।

२२। ततस्तद्वामे राधिकां ध्यायेत् (पाद्मे पातालखण्डे—५०।४४–५०)—वामपार्श्वे स्थितां तस्य राधिकाञ्च स्मरेत्ततः।

सुचीननीलवसनां द्रुतहेमसमप्रभाम्॥
पटाञ्चलेनावृतार्द्ध-सुस्मेराननपङ्कजाम्।
कान्तवक्त्रे न्यस्तनृत्यच्चकोरीचञ्चलेक्षणाम्॥
अङ्गुष्ठतर्ज्जनीभ्याञ्च निजप्रियमुखाम्बुजे।
अर्पयन्तीं पूगफालीं पर्णचूर्णसमन्विताम्॥
मुक्ताहारलसच्चारुपीनोन्नतपयोधराम्।
क्षीणमध्यां पृथुश्रोणीं किङ्किणीजालशोभिताम्॥
रत्नताटङ्ककेयूरमुद्राबलयधारिणीम्।
रणत्कनकमञ्जीर-रत्नपादाङ्गुरीयकाम्॥
लावण्यसारमुग्धाङ्गीं सर्व्वावयवसुन्दरीम्।
आनन्दरससंमग्नां प्रसन्नां नवयौवनाम्॥
सख्यश्च तस्या विप्रेन्द्र तत्समानवयोगुणाः।
तत्सेवनपरा भाव्याश्चामरव्यजनादिभिः॥ इति।

अर्थ—श्रीकृष्णध्यानानन्तर तत्वामपार्श्व में विराजिता श्रीराधिका का स्मरण करे—जो सुसूक्ष्मनीलवस्त्रधारिणी और द्रवीभूत काञ्चन सम प्रभा युक्ता है, जिनका सुस्मेराननपद्म पटाञ्चल से अर्द्धावृत होकर शोभित है, कान्तवदन पर जिनके नृत्यकारी चञ्चलनयनचकोर संलग्न हैं, और जो प्रियमुखाम्बुज में अङ्गुष्ठ और तर्जनी द्वारा ताम्बुल अर्पण करती हैं, जिनके पीनोन्नत कुचयुग्म मुक्ताहार से सुशोभित है, जो क्षीणमध्या, पृथुलनितम्बा किङ्किणीमाला से शोभिता हैं, और रत्नताटङ्ककेयूरवलयधारिणी हैं, जिनके चरण में शब्दायमान कनकनूपुर हैं, और पादाङ्गुली समूह में रत्नाङ्गुरीय विराजमान है' जो लावण्यसारमनोहराङ्गी, सर्व्वावयवसुन्दरी, आनन्दरससंमग्ना, नवयौवना और सुप्रसन्ना हैं। हे विप्रेन्द्र श्रीराधा की सखीगण भी तत्समानवयोगुणयुक्त है, एवं चामरव्यजनादि के द्वारा तत्सेवनपरा सखीगण की भी भावना करनी चाहिए।

२३। यामले यथा (शिव उवाच)—

प्रधानाष्टदलेष्वेवमष्ट श्रीललितादयः।
राधाकृष्ण-सुखामोदाः सेवोपायनपाणयः॥

सवृन्दा यत्नतो ध्येयास्तत्रादौ ललितोत्तरे ।
ऐशान्ये तु विशाखैन्द्रे चित्रेन्दुरेखिकाग्नये ॥
याम्ये चम्पकवल्ली च नैर्ऋत्ये रङ्गदेविका ।
पश्चिमे तुङ्गविद्याथ सुदेवी वायवे तथा ॥

अर्थ—श्रीशिव बोले-प्रधानाष्टदल पर ललितादि अष्टसखी सेवोपायन हस्त से विराजित हैं, श्रीराधाकृष्ण के सुख के लिए ही जिनका आनन्द है, गण सहित उन सभी का यत्नपूर्वक ध्यान करे-अष्टदलों पर अष्टसखियों की स्थिति यथा—उत्तर में श्रीललिता, ईशान में श्रीविशाखा, पूर्व में श्रीचित्रा, अग्नि-कोंण में श्रीइन्दुरेखा, दक्षिण में श्रीचम्पकलता, नैर्ऋत में श्रीरङ्गदेवी, पश्चिम में श्रीतुङ्गविद्या, वायु कोंण में श्रीसुदेवी । श्रीललितादि क्रम से ही ध्यान करना चाहिए; यथा—

गोरचनारुचि-मनोहरकान्तिदेहां
मायूरपुच्छतुलितच्छविचारुचेलाम् ।
राधे !तव प्रियसखीं च गुरुं सखीनां
ताम्बुलभक्तिललितां ललितां नमामि ॥

अर्थ—हे राधे ! आपकी प्रियसखी ललिता की देहकान्ति गोरोचना सदृश है, मयूरपुच्छ के सदृश वस्त्रच्छवि है, जो सखीगण की गुरु है, ताम्बुल सेवा जिसकी प्रिय है, मैं उसको प्रणाम करता हूँ ।

सौदामिनी-निचयचारुरुचिप्रतीकां
तारावलिललितकान्तिमनोज्ञचेलाम् ।
श्रीराधिके ! तव विचित्रगुणानुरूपां
सद्गन्धचन्दनरतां कलये विशाखाम् ॥

अर्थ—जिसकी विद्युत् पुञ्ज तुल्य मनोहर अङ्गरुचि है, तारावलि सदृश जिसके मनोज्ञ वस्त्र है, हे राधे ! आपकी सखी विशाखा—भवदनुरूप विचित्र गुणयुक्ता और आपकी सद्गन्धचन्दन सेवा में अनुरक्ता है, उस विशाखा को मैं वन्दना करता हूँ ।

काश्मीरकान्तिकमनीयकलेवराभां
सुस्निग्धकाचनिचयप्रभचारुचेलाम् ।
श्रीराधिके ! तव मनोरथवस्त्रदाने
चित्रां विचित्रहृदयां सदयां प्रपद्ये ॥

अर्थ—हे श्रीराधे ! आपकी सखी श्रीचित्रा की अङ्गकान्ति कुङ्कुम सदृश कमनीय है, सुस्निग्ध काचनिचयप्रभा के समान मनोहर वस्त्र है, आपकी आकाङ्क्षानुरूप वस्त्र सेवा में कुशला, उस विचित्रहृदया दयावती श्रीचित्रा की शरणागत होता हूँ ।

नृत्योत्सवां हि हरितालसमुज्ज्वलाभां
सद्दाड़िमकुसुमकान्तिमनोज्ञचेलाम् ।
वन्दे मुदा रुचिविनिर्जितचन्द्रलेखाम्
श्रीराधिके ! तव सखीमहमिन्दुलेखाम् ॥

अर्थ—हे राधिके ! आपकी सखी इन्दुलेखा की मैं सहर्ष वन्दना करता हूँ- जो नृत्योत्सवदात्री, हरिताल सदृश समुज्ज्वलवर्णा, उत्तम दाड़िम पुष्पकान्ति तुल्य जिनके मनोज्ञ वस्त्र है, जो कान्ति के द्वारा चन्द्रलेखा को जय करती हैं।

सद्रत्नचामरकरां वरचम्पकाभां
चासाख्यपक्षरुचिरच्छविचारुचेलाम् ।
सर्व्वान् गुणान् तुलयितुं दधतीं विशाखां
राधेऽथ चम्पकलतां भवत्याः प्रपद्ये ॥

अर्थ—जो सद्रत्नचामरहस्ता है, श्रेष्ठचम्पकवर्णा है, चासनामक पक्षी के पक्षवत् जिनके मनोहर वस्त्र है, जो सर्वगुणों में विशाखातुल्या हैं, हे राधे ! आपकी उन चम्पकलता सखी के चरणों में प्रपन्न होता हूँ ।

सत्पद्मकेशरमनोहरकान्तिदेहां
प्रोद्यज्जवाकुसुमदीधितिचारुचेलाम् ।
प्रायेण चम्पकलताधिगुणां सुशीलां
राधे ! भजे प्रियसखीं तव रङ्गदेवीम् ॥

अर्थ—सत्पद्म केशर के तुल्य जिनकी मनोहर देहकान्ति है, एवं प्रस्फुटित जवाकुसुमकान्तिवत् मनोहर वस्त्र है, हे राधे ! आपकी उन प्रियसखी सुशीला रङ्गदेवी का भजन करता हूँ । जो चम्पकलता के गुणों को अधिकार करती हैं

सच्चन्द्रमण्डलमनोरमकुङ्कुमाभां
पाण्डुच्छविप्रचुरकान्तिलसद्दुकूलाम् ।
सर्व्वत्र कोविदतया महितां समज्ञां
राधे ! भजे प्रियसखीं तव तुङ्गविद्याम् ॥

अर्थ—हे राधे ! आपकी समबुद्धिमती सर्व्वत्र कोविदरूप से आदृता प्रियसखी तुङ्गविद्या का भजन करता हूँ। जो सच्चन्द्रमण्डल की अपेक्षा मनोरमा और कुङ्कुमाभा है एवं जो प्रचुर कान्तियुक्त पाण्डुर वर्ण वस्त्र धारण करती हैं

प्रोत्तप्तशुद्धकनकच्छविचारुदेहां
प्रोद्यत्प्रवालनिचयप्रभचारुचेलाम् ।
सर्व्वानुजीवनगुणोज्ज्वलभक्तिदक्षां
श्रीराधिके ! तव सखीं कलये सुदेवीम् ।।

अर्थ—हे राधे ! आपकी सखी सुदेवी का मैं भजन करता हूँ—जिनकी मनोहर देह सुतप्त शुद्धकनकच्छवितुल्य है, प्रकृष्टरूप से उद्गत प्रवालकान्ति के सदृश जिनके मनोहर वस्त्र है, सभी के अनुजीवन स्वरूप उज्ज्वल भक्तिविषय में जो निपुणा हैं।

२४। अथाष्टोपदलेष्वेवमनङ्गमञ्जरीमुखाः ।
सयूथा यत्नतो ध्येयास्तत्रोत्तरे दलद्वये ।।
अनङ्गमञ्जरी तस्या वामे मधुमती मता ।
पूर्व्वयोर्विमला वामे श्यामला दक्षिणे द्वयोः ।।
पालिकामङ्गले वारुणयोर्धन्या च तारका ।

अर्थ—अष्ट उपदल पर सयूथ अनङ्गमञ्जरी प्रभृति का यत्नपूर्वक ध्यान करे। उत्तर दलद्वय पर- अनङ्गमञ्जरी तद्वाम भाग में मधुमती, पूर्व्वदलद्वय पर- विमला और तद्वाम में श्यामला, दक्षिण दलद्वय पर- पालिका एवं मङ्गला है, पश्चिम दलद्वय पर- धन्या एवं तारका हैं।

अथ किञ्जल्कपार्श्वस्थाः सर्व्वदा सेवनोत्सुकाः ।
प्रियनर्म्मसखीर्ध्यायेत् कृष्णदक्षिणतः क्रमात् ।।
लवङ्गमञ्जरीं रूपमञ्जरीं रसमञ्जरीम् ।
गुणरत्युत्तरे नाम मञ्जर्य्यौ भद्रमञ्जरीम् ।।
लीलामञ्जरीकाञ्चैव विलासमञ्जरीं तथा ।
विलासमञ्जरीश्चान्यां मञ्जर्य्यौ केलिकुन्दयोः ।।
मदनाशोकमंजर्य्यौ मंजुलालीं सुधामुखीम् ।
पद्ममंजरिकामेताः षोड़श प्रवरा मताः ।। इति ।।

अर्थ—अनन्तर श्रीकृष्ण के दक्षिण से क्रमशः किञ्जल्क पार्श्वस्था सर्वदा

सेवनोत्सुका प्रियनर्मसखीगण का ध्यान करे। इनका नाम-लवङ्गमञ्जरी, रूपमञ्जरी, रसमञ्जरी, गुणमञ्जरी, रतिमञ्जरी, भद्रमञ्जरी, लीलामञ्जरी, विलासमञ्जरी, अन्य एक विलासमञ्जरी, केलिमञ्जरी, कुन्दमञ्जरी, मदनमञ्जरी, अशोकमञ्जरी, मञ्जुलालीमञ्जरी, सुधामुखीमञ्जरी और पद्ममञ्जरी, ये षोड़श मञ्जरी मञ्जरियों के मध्य में श्रेष्ठा हैं।

श्रीवृन्दादीनां ध्यानम् ; (श्रीवृन्दादि का ध्यान) यथा—

गाङ्गेयचाम्पेयतड़िद्विनिन्दि,-रोचिःप्रवाहस्नपितात्मवृन्दे ।
वन्धूकवद्द्योतितदिव्यवासो, वृन्दे भजे त्वच्चरणारविन्दम् ॥

अर्थ—हे श्रीवृन्दे ! स्वर्णचम्पक और विद्युत्कान्तिविनिन्दित आपकी अङ्गकान्ति है, इस कान्तिरूप प्रवाह में आपके आत्मीयवृन्द निमग्न रहते हैं। बाँधुलिपुष्पवत् आपके दीप्तियुक्त वसन है, हे देवि ! मैं आपके पदकमल का भजन करता हूँ।

वसन्तकालोद्भवकेतकीततिप्रभाविड़म्ब्युद्भटकान्तिड़म्बराम् ।
विनिन्दितेन्दीवरभास्वराम्बरामनङ्गपूर्व्वां प्रणमामि मञ्जरीम् ॥

अर्थ—जिनका उत्कृष्ट कान्तिविस्तार वसन्तकालजात केतकीराजि की प्रभा को तिरस्कार करता है, जिनके दीप्तिशील वसन इन्दीवरको पराजित करते हैं, उन अनङ्गमञ्जरी को मैं प्रणाम करता हूँ।

गोरचनाविनिन्दिनिजाङ्गकान्ति मायूरपिञ्छाभसुचोनवस्त्राम् ।
श्रीराधिकापादसरोजदासीं रूपाख्यकां मञ्जरिकां भजेऽहम् ॥

अर्थ—जिनके अङ्ग की कान्ति गोरचना को निन्दित करती है, जो मयूरपिञ्छतुल्य सुचीनवस्त्र धारण करती हैं एवं श्रीराधा के पादपद्म में दास्य प्राप्त है, उस रूपमञ्जरी का भजन करता हूँ।

प्रतप्तहेमाङ्गरुचिं मनोज्ञां शोणाम्बरां चारुसुभूषणाढ्याम् ।
श्रीराधिकापादसरोजदासीं तां मञ्जुलालीं निरतं भजामि ॥

अर्थ—जिनका प्रतप्त स्वर्णवत् मनोहर देह है, जो रक्ताम्बरा, चारुभूषणाढ्या और श्रीराधिकापादाब्जदासी है, उन मञ्जुलालीमञ्जरी का भजन करता हूँ।

तारानिवासयुगलं वसानां, तड़ित्समानसुतनुच्छविश्च ।
श्रीराधिकाया निकटे वसन्तीं भजे सुरूपां रतिमञ्जरीं ताम् ॥

अर्थ-जिनके वस्त्रयुगल तारकाचिह्नित है एवं तड़ित् के समान जिनकी अङ्गच्छवि है, जो श्रीराधिका की निकटस्था है, उन सुन्दरी रतिमञ्जरी का भजन करता हूँ

हंसपक्षरुचिरेण वाससा संयुक्तां विकचचम्पकद्युतिम् ।
चारुरूपगुणसम्पदान्वितां, सर्व्वदापि रसमञ्जरीं भजे ॥

अर्थ-जो हंसपक्षवसना, विकचचम्पकगौरी और मनोहर रूपगुण सम्पद्युक्ता है, मैं सर्वदा उन रसमञ्जरी का भजन करता हूँ ।

जबानिभदुकूलाढ्यां तड़िदालितनुच्छविम् ।
कृष्णामोदकृपापेक्षां भजेऽहं गुणमञ्जरीम् ॥

अर्थ—जिनके वसन जवापुष्पवत् है, एवं तनुच्छवि तड़ित् पुञ्जवत् है, जो श्रीकृष्ण के आमोद और कृपा की अपेक्षा करती है, मैं उन गुणमञ्जरी का भजन करता हूँ ।

स्वर्णकेतकीविनिन्दिकायिकां निन्दितभ्रमरकान्तिकाम्बराम् ।
कृष्णपादकमलोपसेविनी,-मर्च्चयामि सुविलासमञ्जरीम् ॥

अर्थ—जिनकी अङ्गकान्ति स्वर्णकेतकी एवं वस्त्र भ्रमर कान्ति की निन्दा करते हैं, जो श्रीकृष्णपादकमल की अधिकरूप से सेवा करती हैं, उन सुविलास-मञ्जरी का मैं भजन करता हूँ ।

चपलाद्युतिनिन्दिकान्तिकां, शुभतारावलिशोभिताम्बराम् ।
व्रजराजसुतप्रमोदिनीं, प्रभजे ताश्च लवङ्गमञ्जरीं ॥

अर्थ-जिनकी अङ्गद्युति विद्युत् कान्ति की निन्दा करती है, जो शुभतारा-वलिशोभितवस्त्रा और श्रीकृष्णप्रमोदिनी है, उन लवङ्गमञ्जरी का मैं प्रकृष्ट-रूप से भजन करता हूँ ।

विशुद्धहेमाब्जकलेवराभां काचद्युतिचारुमनोज्ञचेलाम् ।
श्रीराधिकाया निकटे वसन्तीं भजाम्यहं कस्तूरीमञ्जरीं ताम् ॥

अर्थ—विशुद्ध हेमाब्जवत् जिनकी अङ्गकान्ति और काचद्युतिवत् मनोज्ञ वस्त्र है, श्रीराधा की निकट वासिनी उन कस्तूरीमञ्जरीं का मैं भजन करता हूँ

एतासां सङ्गिनी भूत्वा स्वगुर्व्वाज्ञानुसारतः ।
राधामाधवयोः सेवां कुर्य्यान्नित्यं प्रयत्नतः ॥ इति ।

अर्थ—साधक अन्तश्चिन्तित देह से इन सभी की सङ्गिनी होकर गुर्वाज्ञा-नुसार प्रयत्नपूर्वक श्रीराधामाधव की नित्य सेवा करे ।

×श्रीकृष्णपूजा और श्रीराधापूजा विधि×—

२५ । ततः श्रीकृष्णं तन्मन्त्रेणैव पूजयेत् ; यथा—एतत् पाद्य-मित्यादिना । तथा श्रीराधिकां तन्मन्त्रेणैव पूजयेत् ; यथा—एतत्

पाद्यमित्यादिना । ततः प्रत्येकं सखीं पूजयित्वा वाह्यपूजां कुर्य्यात् । ततो गुरुमन्त्रं दशधा जपेत् तद्गायत्रीश्च जपेत् । ततः श्रीकृष्णमन्त्र-मष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा जपेत् । ततः कामगायत्रीश्च दशधा जपेत् । ततः श्रीराधामन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत् । तद्गायत्रीश्च दशधा जपेत् । ततो जपसमर्पणं कुर्य्यात् ।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात् त्वयि स्थिते ॥

अर्थ—तत्पश्चात् श्रीकृष्ण की उनके मन्त्र से पूजा करे । यथा—एतत् पाद्यं इत्यादि अर्थात् मूलमन्त्र (श्रीकृष्णमन्त्र) उच्चारण करके "एतत् पाद्यं श्री-कृष्णाय नमः" इस प्रकार अन्यान्य उपचार (अर्घादि) समर्पण करे। श्रीकृष्ण की जितने प्रकार एवं जितने उपचारों से पूजा होगी, उसी प्रकार से एवं उतने ही उपचारों से श्रीराधिका की तदीय मन्त्र से पूजा करनी होगी । यथा-एतत् पाद्यं इत्यादि । अर्थात् श्रीराधिका का मन्त्रोच्चारण पूर्वक "एतत् पाद्यं श्री-राधिकायै नमः" उच्चारण कर श्रीचरण में पाद्य निवेदन करे । इसी प्रकार अर्घ्यादि सकलोपचार से उनकी पूजा करे। तदनन्तर प्रत्येक सखी की पूजा करके वाह्य पूजा करनी चाहिए ।

इस अंश के लिए श्रीग्रन्थकार कृत पद्य यथा—

एइ क्रमे सब सखीगण ध्यान करि ।
आपनार रूपगुणे आपना पासरि ॥
सवार सङ्गिनी हइया गुरु आज्ञा लइया ।
राधाकृष्ण सेवा करे सुयत्न करिया ॥
तवे मानसिक कृष्णेर करये सेवन ।
तार मन्त्रे पाद्यगन्ध पुष्प समर्पण ॥
धूप दीप नानाविध नैवेद्य उत्तम ।
आचमन ताम्बूलादि करे निवेदन ॥
तवे श्रीराधिका सेवा करे विचक्षण ।
तार मन्त्रे पाद्यादिक करे समर्पण ॥
प्रत्येक सकल सखी पूजन करिया ।
आरात्रिक करे तवे पुलकित हैया ॥
एइ मते **अन्तःपूजा** करि समापन ।
तवे वाह्यपूजा करे साधक ये जन ॥

श्रीराधिका की मानसी पूजा सम्बन्ध में श्रीपाद विश्वनाथ चक्रवर्त्ती प्रभुने सङ्कल्प कल्पद्रुम में उल्लेख किया है, उसका पोषकरूप से उल्लेख करते हैं—

वृन्दावने सुरमहीरुहयोगपीठे सिंहासने स्वरमणेन विराजमानाम् ।
पाद्यार्घ्यधूपविधुदीपचतुर्विधान्नस्त्रग्भूषणादिभिरहं परिपूजयानि ॥

कृष्णदेवसार्व्वभौमकृत टीका—वनभ्रमणक्रमेण आगत्य वृन्दावने कल्पवृक्षयोगपीठसिंहासने श्रीकृष्णेन सह विराजमानां त्वां पाद्यार्घ्य–धूपकर्पुरदीपचतुर्व्विधान्न माल्यालङ्कारादिभिः पूजयानि ।

अर्थ—हे देवि ! तुम वनभ्रमणक्रम से आकर वृन्दावन में कल्पवृक्ष के मूल में योगपीठ सिंहासन पर स्वरमण श्रीकृष्ण के साथ विराजती हैं, मैं पाद्य, अर्घ्य, धूप, कर्पु रयुक्त दीप, चतुर्विधान्न एवं माल्यालङ्कारादि के द्वारा तुह्मारी पूजा करूँगा । इस श्लोक के प्रमाण से श्रीयोगपीठ पर श्रीराधिका को पूजा सर्व्वविध उपचार से उल्लिखित है । श्रीसिद्ध बाबा ने भी इसका उल्लेख किया है ।

वाह्यपूजा भी मूलमन्त्र उच्चारण पूर्वक " एतत् पाद्यं श्रीकृष्णाय नमः " इति सर्वप्रकार उपचार से पूजा करे । श्रीराधाकृष्णकी पूजा श्रीमन्महाप्रभु की पूजा के समान ही जाननी चाहिए ।

मूलमन्त्रोच्चारण सह एतदर्घ्यं श्रीकृष्णाय नमः, इस प्रकार मन्त्रोच्चारण करके इदमाचमनीयं श्रीकृष्णाय नमः, एष गन्धः, एतत् सचन्दनतुलसीपत्रं, एतत् सचन्दनपुष्पं, एष धूपः, एष दीपः, एतन्नै-वेद्यं, एतत् पानीयजलं, इदमाचमनीयं, एतत्ताम्बुलं, एतद्गन्धमाल्यं, एष पुष्पाञ्जलिः इत्यादि प्रत्येक उपचार मूलमन्त्रोच्चारण पूर्वक श्रीकृष्णाय नमः कहकर समर्पण करे । श्रीराधा की वाह्यपूजा भी श्रीकृष्णपूजा की भाँति उसी प्रकार उपचारों से करनी चाहिए—

श्रीरधिका के मन्त्रोच्चारण पूर्वक एतत् पाद्यं श्रीराधिकायै नमः । एतदर्घ्यं, इदमाचमनीयं, एष गन्धः, एतत् सचन्दनतुलसीपत्रं, एतत् सचन्दनपुष्पं, एष धूपः, एष दीपः, एतन्नैवेद्यं, एतत् पानीयजलं, इदमाचतनीयं, एतत् गन्धमाल्यं, एष पुष्पाञ्जलिः इत्यादि ।

श्रीकृष्णमूर्त्ति के श्रीचरण में जितने दल तुलसो समर्पण करे उतने दल तुलसी श्रीराधिका मूर्त्ति के श्रीचरणों में अर्पण करे । तत्पश्चात् श्रीगुरुमन्त्र और गायत्री दशवार जप करके श्रीकृष्णमन्त्र अष्टोत्तरसहस्र (११०८) अथवा

(१०८) वार जप करे । तत्पश्चात् कामगायत्री दशवार उसके पश्चात् श्री-राधामन्त्र अष्टोत्तरशत वार और तद् गायत्री दशवार जप करे, तदनन्तर जप समर्पण करे । जप समर्पण मन्त्र का अर्थ—हे देव ! आप गुह्य और अतिगुह्य विषय के रक्षाकर्त्ता हैं, मत्कृत जप ग्रहण कीजिए । आप साक्षात् भगवान रूप में विराजित हैं, आपके अनुग्रह से मेरा जप सिद्ध हो ।

२६ । ततो विज्ञप्तिपाठः ; तदनन्तर विज्ञप्ति पाठ करे—

मत्समो नास्ति पापात्मा नापराधी च कश्चन ।
परिहारेऽपि लज्जा मे किं ब्रुवे पुरुषोत्तम ॥
युवतीनां यथा यूनि यूनाञ्च युवतौ यथा ।
मनोऽभिरमते तद्वन्मनो मे रमतां त्वयि ॥
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम् ।
त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो ॥
कदाहं यमुनातीरे नामानि तव कीर्त्तयन् ।
उद्बाष्पः पुण्डरीकाक्ष ! रचयिष्यामि ताण्डवम् ॥ इति ॥

अर्थ— हे पुरुषोत्तम ! मत्सदृश पापात्मा अन्य नहीं है , अपराधी भी नहीं है , अधिक क्या कहूँ , हे भगवन् ! मुझको क्षमा करो— इस प्रकार परिहार विषय से निवेदन करने पर भी मुझे लज्जावोध होता है । युवतीगण को जिस प्रकार युवा पुरुष में और युवकगण को जिस प्रकार युवती में मन रत होता है , हे भगवन् ! आप में भी मेरा मन उसी प्रकार रत हो । पृथ्वी से पद स्खलित होने पर वह पृथ्वी ही अवलम्बन है , हे प्रभो ! आपके चपण में अपराधकारी का भी आप ही एकमात्र शरण है। हे पद्मनयन ! मैं कव यमुना के तीर पर आपका नाम-कीर्त्तन करते-करते उद्वाष्प होकर नृत्य करूँगा ।

२७ । **गोविन्दवल्लभे राधे प्रार्थये त्वामहं सदा ।**
त्वदीयमिति जानातु गोविन्द मां त्वया सह ॥
कदा गानकलानृत्यं शिक्षयिष्यसि राधिके !
येन तुष्टो हरिस्ते मां किङ्करीमिति मन्यते ॥
राधे वृन्दावनाधीशे करुणामृतवाहिनि !
कृपया निजपादाब्जदास्यं मह्यं प्रदीयताम् ॥
तवैवास्मि तवैवास्मि न जीवामि त्वया विना ।

इति विज्ञाय राधे त्वं नय मां स्वपदान्तिकम् ॥ इति ॥

अर्थ— हे गोविन्दप्रिये राधे ! आपके श्रीचरण में सर्वदा मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि भवत्सह गोविन्द मुझको भवदीय कहकर अवगत हों। हे राधिके आप मुझको कब गानकलानृत्य की शिक्षा देंगी ? श्रीहरि यह शिक्षा देखकर तुष्ट होंगे एवं मुझकों अपनी किङ्करी समझेंगे। हे करुणामृत वाहिनि ! वृन्दावनाधीशे राधे ! कृपापूर्वक मुझको अपना पादाब्जदास्य प्रदान करो। हे राधे ! मैं आपका ही हूँ, मैं आपका ही जन हूँ, आप मुझको अङ्गीकार नहीं करेंगी तो मेरा जीवन नहीं रहेगा। हे राधे ! ऐसा ही जानकर मुझको निज पादपद्म के समीप में ग्रहण करो।

२८। ततः पद्यपञ्चकं पठेत्। तदनन्तर पद्यपञ्चक का पाठ करे—

संसारसागरान्नाथौ पुत्रमित्रगृहाकुलात् ।
गोप्तारौ मां युवामेव प्रपन्नभयभञ्जनौ ॥
योऽहं ममास्ति यत्किञ्चिदिहलोके परत्र च ।
तत्सर्व्वं भवतोरद्य चरणेषु मयार्पितम् ॥
अहमप्यपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः ।
अगतिश्च ततो नाथौ भवन्तौ मे भवेद्गतिः ॥
तवास्मि राधिकानाथ कर्म्मणा मनसा गिरा।
कृष्णकान्ते तवैवास्मि युवामेव गतिर्मम ॥
शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ ।
प्रसादं कुरुतां दास्यं मयि दुष्टेऽपराधिनि ॥
इत्येवं जपतां नित्यं प्रस्ताव्यपद्यपञ्चकम् ।
अचिरादेव तद्दास्यमिच्छतां मुनिसत्तम ॥ इति ।

हे राधागोविन्द ! पुत्रमित्रगृहाकुल संसाररूप सागर से मेरी रक्षा करो। आप दोनों ही प्रपन्न व्यक्ति का भयभञ्जनकारी हैं। मैं जो व्यक्ति हूँ, एवं मेरा इहलोक और परलोक जो कुछ भी है तत्समस्त ही आपके चरणों में आज समर्पण करता हूँ। मैं अपराधसमूह का आलय और साधनहीन हूँ। हे राधा-गोविन्द ! गतिरहित इस व्यक्ति का आप दोनों ही एकमात्र आश्रय हैं। हे राधिकानाथ ! हे कृष्णकान्ते ! कर्म-मन-वाक्य से मैं आपका ही हूँ, अपर किसी का नहीं। हे कृपानिकराकर ! आपके चरणों में शरणापन्न हूँ, इस अपराधी दुष्ट व्यक्ति के प्रति दास्य देकर कृपा करो। हे मुनिसत्तम ! तद्दास्या-

भिलाषी व्यक्तिगण इस प्रकार नित्यप्रति पद्यपञ्चक का पाठ करके अचिर में ही तद्दास्य प्राप्त होंगे ।

२९ । ततः प्रसादगन्धादिभिर्वैष्णवान् पूजयेत् । "एते प्रसादि-गन्धपुष्पे वैष्णवेभ्यो नमः" इति ।

अनन्तर पद्यपञ्चक पाठ के बाद प्रसादी गन्धादि के द्वारा वैष्णवगण की पूजा करें । यथा "एते" इत्यादि ।

शुकः सूतस्तथा व्यासो नारदः कपिलो मनुः ।
प्रह्लादश्चाम्बरीषश्च हनुमांश्च विभीषणः ॥
अक्रूरश्चोद्धवः श्रीमन्मार्कण्डेयो युधिष्ठिरः ।
यमो निमिर्ध्रुवो भीष्मः पृथुश्चैव बलिस्तथा ॥
सनकाद्याश्च ते सर्व्वे तथैवान्ये च वैष्णवाः ।
निर्म्माल्यं वासुदेवस्य सर्व्वे गृह्णन्तु कामदम् ॥ इति

पाद्मोक्तमन्त्रेण प्रसादनिर्म्माल्य-नैवेद्यादिकं वैष्णवेभ्यः समर्पयेदिति ।

अर्थ—शुक, सूत, व्यास, नारद, कपिल, मनु, प्रह्लाद, अम्बरीष, हनुमान, विभीषण, अक्रुर, उद्धव, मार्कण्डेय, युधिष्ठिर, यम, निमि, ध्रुव, भीष्म, पृथु, बलि और सनकादि वैष्णव तथा अन्यान्य वैष्णव सव वासुदेव का निर्म्माल्य ग्रहण करें जो निर्म्माल्य सर्वाभीष्ट दान करता है । पद्मपुराणोक्त इस मन्त्र से वैष्णवगण को प्रसाद निर्माल्य नैवेद्यादि समर्पण करे — "एतत् कृष्णप्रसादि-निर्माल्यं श्रीशुक-सूत-व्यास-नारदादिवैष्णवेभ्यो नम." इस प्रकार कृष्ण-नैवेद्यादि समर्पण करे ।

३० । अथ तुलसीपूजा—

प्राग् दत्त्वार्घ्यं ततोऽभ्यच्चर्य गन्धपुष्पाक्षतादिना ।
स्तुत्वा भगवतीं ताञ्च प्रणमेत् प्रार्थ्य दण्डवत् ॥

अर्थ—प्रथम अर्घ्यदान करके गन्ध, पुष्प और अक्षतादि द्वारा पूजा करे, पश्चात् श्रीभगवती तुलसी को साष्टाङ्ग प्रणाम करके प्रार्थना करे ।

तत्रार्घ्यमन्त्रः (तुलसी पूजा का अर्घ्यमन्त्र) **यथा**—

श्रियः श्रिये श्रियावासे नित्यं श्रीधरसत्कृते ।
भक्त्या दत्तं मया देवि ! अर्घ्यं गृह्ण नमोऽस्तु ते ॥

इति पठित्वा इदमर्घ्यं श्रीतुलस्यै नमः ।

अर्थ–हे देवि ! आप श्री की आश्रय और निवास भूमि हैं, आप सर्वदा ही श्रीधरकर्त्तृक आहृता हैं। मैं भक्तिपूर्वक आपको अर्घ्यदान करता हूँ-ग्रहण करो, आपको नमस्कार करता हूँ। इस प्रकार पाठ करके "इदमर्घ्यं तुलस्यै नमः" कहकर अर्घ्यार्पण करे। पश्चात् "एष गन्धः श्रीतुलस्यै नमः, एतत् सचन्दन-पुष्पं श्रीतुलस्यै नमः, एतदक्षतं श्रीतुलस्यै नमः, इस प्रकार एष धूपः, एष दीपः एतन्नैवेद्यं, एतदाचमनीयं इत्यादि उपचार श्रीतुलस्यै नमः कहकर समर्पण करे। तथाहि पद्य—

तवे तुलसी पूजा करे सावधाने। प्रथमे त पाद्य अर्घ्य श्रीखण्ड-कुसुमे॥
धूप-दीप-नैवेद्यादि आचमन दिया। तवे निराजन करे प्रेमयुक्त हैया॥

अथ पूजा मन्त्रः–निर्म्मिता त्वं पुरादेवैरर्च्चिता त्वं सुरासुरैः।
तुलसि हर मे पापं पूजां गृह्ण नमोऽस्तु ते॥

अर्थ—हे तुलसि ! आप पुराकाल में सुरगण कर्त्तृक निर्मिता (प्रकटिता) हुई, सुरासुर सकल ही आपकी पूजा करते हैं। आप मेरा पाप नाश करो एवं मत्कृत पूजा ग्रहण करो, आपको नमस्कार करता हूँ।

अथ स्तुतिमन्त्रः–महाप्रसादजननी सर्व्वसौभाग्यवर्द्धिनी।
आधिव्याधिहरा नित्यं तुलसि त्वां नमोऽस्तु ते॥ इति॥

अर्थ— हे तुलसि ! आप श्रीहरि की प्रसन्नता जन्य उदयकारिणी, सर्व्व-सौभाग्यवर्द्धिनी एवं नित्य आधिव्याधिहारिणी हैं, आपको नमस्कार है।

अथ प्रार्थनामन्त्रः–श्रियं देहि यशो देहि कीर्त्तिमायुस्तथा सुखम्।
बलं पुष्टिं तथाधर्म्मं तुलसि ! त्वं प्रसीद मे॥ इति॥

अर्थ –हे तुलसी देवि ! आप मुझे सम्पत्ति, यश, कीर्ति, दीर्घायु, सुख, बल, पुष्टि और धर्म प्रदान करो, एवं मेरे प्रति प्रसन्न होओ।

प्रणामवाक्यम् "या दृष्टा निखिलाघसङ्घशमनी" इति।

यह पूर्व में उद्धृत है। श्रीग्रन्थकारने तुलसी पूजा का प्रकरण श्रीहरिभक्ति-विलास से उद्धृत किया है।

ततः प्रणमेत्—"वन्देऽहं श्रीगुरोः" इति।

अनन्तर इस श्लोक को पढ़कर गुर्वादि को प्रणाम करना चाहिए।

इति प्रातःकृत्यम्। प्रातः कृत्य समाप्त।

* इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां द्वितीयः प्रकाशः। *

* श्रीसाधनामृतचन्द्रिका का द्वितीय प्रकाश समाप्त हुआ है। *

★  ★

ॐ

[तृतीयः प्रकाशः]

१। अथ **पूर्वाह्णकृत्यम्**। तत्रादौ गौरचन्द्रस्य यथा (भावनासारसंग्रहे);-हरिवनगतिलीलां व्याकुलीभूतगोष्ठां

स्मृतिविषयगतां यः कारयामास साक्षात्।
तदनुकरणकारी भक्तवृन्दस्य मध्ये
तमहमिह भजामि गौरचन्द्रं हि नित्यम्॥ इति।

अर्थ— प्रातःकृत्यानन्तर पूर्वाह्णकृत्य का उल्लेख करते हैं--पूर्वाह्णकृत्य में केवल लीलास्मरण जाननी चाहिए। प्रथम श्रीगौरचन्द्र की लीलास्मरण यथा-

श्रीकृष्ण सखागण के साथ वन में गमन करने पर गोष्ठवासी व्याकुल हो रहे हैं, इस लीला का स्मरण करके जो भक्तवृन्द के मध्य में अनुकरण करते हैं, उन गौरचन्द्र का मैं नित्य ही भजन करता हूँ।

२। स्मरणमङ्गले—

पूर्वाह्णे धेनुमित्रैर्विपिनमनुसृतं गोष्ठलोकानुयातं
कृष्णं राधाप्तिलोलं तदभिसृतिकृते प्राप्ततत्कुण्डतीरम्।
राधाञ्चालोक्य कृष्णं कृतगृहगमनामार्ययार्कार्च्चनायै
दिष्टां कृष्णप्रवृत्त्यै प्रहितनिजसखीवर्त्मनेत्रां स्मरामि॥

अर्थ— पूर्वाह्ण में धेनु और मित्रगण के सहित जिनके वनगमन करने पर श्रीनन्द यशोदा प्रभृति व्रजवासी जनगण पीछे पीछे गमन करते हैं। जो श्री--राधा के मिलन के लिए सतृष्ण एवं श्रीराधा के अभिसारार्थ राधाकुण्डतीर पर उपस्थित होते हैं, उन श्रीकृष्ण का मैं स्मरण करता हूँ। एवं जो राधा आर्या जटिला कर्त्तृक सूर्यपूजार्थ प्रेरित होकर श्रीकृष्ण का वृत्तान्त अवगत होने के लिए प्रेरित निज सखीद्वय (कस्तुरी एवं तुलसी) का आगमन पथ निरीक्षण करती हैं, उन श्रीराधा को मैं स्मरण करता हूँ।

सनत्कुमारसंहितायाम्—

अर्थात् सनत्कुमार संहिता में इस प्रकार पूर्वाह्ण स्मरण वर्णित है।

❋ इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां तृतीयः प्रकाशः। ❋

❋ श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का तृतीय प्रकाश समाप्त हुआ है ❋



(चतुर्थः प्रकाशः)

अथ मध्याह्नकृत्यम् । मध्याह्नकृत्य का उल्लेख करते हैं—

१। तत्र मान्त्राद्येकतरस्नानं कुर्य्यात्, यथोक्तं श्रीहरिभक्ति-विलासे (३)-मान्त्रं पार्थिवमाग्नेयं वायव्यं दिव्यमेव च ।

वारुणं मानसञ्चेति स्नानं सप्तविधं स्मृतम् ॥

"शन्न आप" स्तु वै मान्त्रं मृदालम्भन्तु पार्थिवम् ।

भस्मना स्नानमाग्नेयं स्नानं गोरजसानिलम् ॥

आतपे सति या वृष्टिर्दिव्यं स्नानं तदुच्यते ।

वहिर्नद्यादिषु स्नानं वारुणं प्रोच्यते बुधैः ।

ध्यानं यन्मनसा विष्णोर्मानसं तत् प्रकीर्त्तितम् ॥

मध्याह्नकृत्य अनुष्ठान में मन्त्रादि सात प्रकार स्नानों के मध्य में एक प्रकार स्नान साधक करे। सप्तविध स्नान यथा — मान्त्र, पार्थिव, आग्नेय, वायव्य, दिव्य, वारुण और मानस यह सप्तविध स्नान है। "शन्न आप" इत्यादि मन्त्रपूत जल किंचित् शरीर में प्रक्षेप करने से मान्त्र स्नान होता है। वैष्णवगण को मूल मन्त्रादि द्वारा पूत जल प्रक्षेप से ही मान्त्र स्नान होता है। मृत्तिकास्पर्श स्नान को पार्थिव स्नान, भस्मद्वारा स्नान को आग्नेय स्नान, गोधूलि द्वारा स्नान को वायव्य स्नान एवं धूप रहते हुए वृष्टि होने पर उससे स्नान को दिव्य स्नान कहा जाता है। बहिर्नदि-आदि में जो स्नान होता है, उसको बुधगण वारुण स्नान कहते हैं। मन में विष्णुध्यान ही मानस स्नान कथित है।

किञ्च—असामर्थ्येन कायस्य कालदेशाद्यपेक्षया ।

तुल्यफलानि सर्व्वाणि स्युरित्याह पराशरः ॥

स्नानानां मानसं स्नानं मन्वाद्यैः परमं स्मृतम् ।

कृतेन येन मुच्यन्ते गृहस्था अपि वै द्विजाः ॥

अर्थ— और भी लिखित है, पराशर ने कहा- देह की असामर्थ्य से और कालदेशादि की अपेक्षा से भी सर्वप्रकार स्नान के तुल्य फल मानस स्नान से हो जाता है। मनु प्रभृति ने भी कहा है कि— मानस स्नान ही सर्वप्रकार स्नानों में प्रधान है। हे द्विजगण ! मानस स्नान के द्वारा गृहस्थगण भी मुक्ति-प्राप्त कर लेते हैं।

ततः पूजासम्भारैर्यथापूर्व्ववत् श्रीगुर्व्वादिक्रमेण मध्याह्नपूजा-विज्ञप्तिपाठादिकं कुर्य्यात्। अथ तत्र ध्यानं यथा क्रमदीपिकायाम् (३।१-१६,२३-३१)—

१। अथ प्रकटसौरभोद्गलितमाध्विकोत्फुल्लसत्-
प्रसूननवपल्लवप्रकरनम्रशाखर्द्रुमैः।
प्रफुल्लनवमञ्जरीललितवल्लरीवेष्टितैः
स्मरेच्छिशिरितं शिवं सितमतिस्तु वृन्दावनम्॥

अर्थ—अनन्तर साधक पूजासम्भार को पूर्ववत् (प्रातः कालीन पूजाविधि के समान) श्रीगुर्व्वादिक्रम से मध्याह्न पूजा और विज्ञप्ति पाठादि करे। इस मध्याह्नपूजा के विषय में श्रीकृष्ण का ध्यान यथा-(१) पश्चात् साधक विशुद्ध चित्त से परम मङ्गलमय श्रीवृन्दावन का ध्यान करे—श्रीवृन्दावन नानाविध बृक्ष छाया से सुशीतल एवं समस्त तरु की सौरभ से परिपूर्ण है। बृक्षशाखा-समूह मधुक्षरणकारी है, एवं विकसित अत्युत्तमपुष्प और नवकिसलयों के भार से अवनत है, प्रफुल्लित नवमञ्जरी के द्वारा मनोहारिणी लतागण बृक्षादि को वेष्टन करके विराजित है।

२। विकाशिसुमनोरसास्वादनमञ्जुलैः सञ्चर-
च्छिलिमुखोद्गतैर्मुखरितान्तरं झङ्कृतैः।
कपोतशुकशारिकापरभृतादिभिः पत्रिभि-
र्विराणितमितस्ततो भुजगशत्रुनृत्याकुलम्॥

अर्थ—विकाशोन्मुख कुसुमसमूह का रसास्वादन से मत्तभ्रमरसमूह विचरण कर रहे है। उनके मुख से उद्गत झङ्कार से वृन्दावन का अभ्यन्तर स्थल झङ्कृत हो रहा है। उसी प्रकार पारावत, शुक, शारिका और कोकिलागण कलरव कर रहे हैं, और मयूरगण भी चारों ओर नृत्य कर रहे हैं।

३। कलिन्ददुहितुश्चलल्लहरिविप्रुषां वाहिभि-
र्विनिद्रसरसीरुहोदररजश्चयोद्धूसरैः।
प्रदीपितमनोभवव्रजविलासिनीवाससां
विलोलनपरैर्निषेवितमनारतं मारुतैः॥

अर्थ-यमुना का चञ्चल तरङ्गसमूह के जलकणवाही, विकसित पद्मराग के धारा से धूसरित, एवं प्रदीप्त कृष्णप्रेमयुक्त विलासिनीगण के वसनकम्पनकारी

मृदु-मन्द समीरण के द्वारा निरन्तर श्रीवृन्दावन सेवित हो रहा है।

४। प्रवालनवपल्लवं मरकतच्छदं वज्रमौ–
क्तिकप्रकरकोरकं कमलरागनानाफलम्।
स्थविष्ठमखिलर्त्तुभिः सततसेवितं कामदं
तदन्तरमपि कल्पकाङ्घ्रिपमुदञ्चितं चिन्तयेत् ॥

अर्थ—इस वृन्दावन के मध्य में कल्पतरु की भावना करे। विद्रुम ही इस तरु का नवपल्लव, मरकत (नीलकान्तमणि) जिसके पत्र, हीरक और मुक्ता-सकल जिसके कोरक है, एवं पद्मरागमणि ही इस तरु के नाना प्रकार फल है। यह कल्पवृक्ष अतीव स्थूल और उच्च, षट्ऋतु के द्वारा सर्वदा सेवित है, एवं जनगण की सर्वप्रकार कामनाओं को पूरण करता है।

५। सुहेमशिखरावलेरुदितभानुवद्भास्वरा–
मधोऽस्य कनकस्थलीममृतशीकरासारिणः।
प्रदीप्तमणिकुट्टिमां कुसुमरेणुपुञ्जोज्ज्वलां
स्मरेत् पुनरतन्द्रितो विगतषट्तरङ्गां बुधः ॥

अर्थ—सुधी व्यक्ति विन्दु-विन्दु सुधावर्षणकारी इस कल्पवृक्ष के तलदेश में कनकस्थली की चिन्ता करे। उत्तम काञ्चनमय शिखर श्रेणी के सन्निधान में समुदित सूर्य सदृश यह स्वर्णमयी स्थली तेजसम्पन्न है, उसी प्रकार कुसुम-रेणु पुञ्ज से समुज्ज्वल मणिकुट्टिम अर्थात् रत्नवद्ध भूमी विद्यमान है। उसका निरलस होकर चिन्तन करे। इस स्थान में संसार सागर की छः तरङ्ग (शोक, मोह, जरा मृत्यु, क्षुधा और पिपासा), देखी नहीं जाती है।

६। (क) तद्रत्नकुट्टिमनिविष्टमहिष्ठयोग,—
पीठेऽष्टपत्रमरुणं कमलं विचिन्त्य !
उद्यद्विरोचनसरोचिरमुष्य मध्ये,
सञ्चिन्तयेत् सुखनिविष्टमथो मुकुन्दम् ॥

अर्थ—(क) उसकनकस्थली के रत्नवद्ध भूभाग में संस्थित महत्तर योगपीठ में लोहित वर्ण कमल की भावना करे। तन्मध्यस्थल पर नवोदित सूर्यतुल्य दीप्तिमान् श्रीकृष्ण सुखपूर्वक विराजित हैं, यह भावना करे।

(ख) सूत्रामरत्नदलिताञ्जनमेघपुञ्ज,–
प्रत्यग्रनीलजलजन्मसमानभासम्।

सुस्निग्धनीलघनकुञ्चितकेशजालं,–
राजन्मनोज्ञशितिकण्ठशिखण्डचूड़म् ।

अर्थ—इन्द्रनीलमणि, दलिताञ्जन, मेघपटल, एवं नवनीलोत्पलसदृश तदीय कान्ति, सुस्निग्ध घनकुञ्चित तदीय केशपाश और तदीय चूड़ा के उपर शिखिवर्ह सुशोभित है।

७। रोलम्बलालितसुरद्रुमसूनकल्पि-तोत्तंसमुत्कचनवोत्पलकर्णपूरम् ;
लोलालकस्फुरितभालतलप्रदीप्त-गोरोचनातिलकमुज्ज्वलचिल्लिमालम् ॥

अर्थ—अलिकुलनिषेवित कल्पपादपकुसुम (पारिजातकुसुम) से रचित तदीय शिरोभूषण, विकशित नवोत्पल तदीय कर्णपुर है, तदीय भालप्रदेश पर चञ्चल अलकावली विराजित है, प्रदीप्त गोरोचना तिलक शोभा पाता है, एवं भ्रूलता-युगल मानो नृत्य कर रही हैं।

८। आपूर्णशारदगताङ्कशशाङ्कविम्ब–
कान्ताननं कमलपत्रविशालनेत्रम् ॥
रत्नस्फुरन्मकरकुण्डलरश्मिदीप्त–
गण्डस्थलीमुकुरमुन्नतचारुनासम् ॥

अर्थ—उनका वदन पूर्ण निष्कलङ्क शारदीय चन्द्रमा के तुल्य मनोरम है, नेत्रयुगल पद्मपत्रवत् विशाल है। दर्पणवत् सुविमल गण्डस्थल रत्नखचित मकरकुण्डल से दीप्तिमान है, नासापुट उन्नत और मनोरम है।

९। सिन्दूरसुन्दरतराधरमिन्दुकुन्द—
मन्दारमन्दहसितद्युतिदीपिताङ्गम् ।
वन्यप्रवालकुसुमप्रचयावक्लृप्त—
ग्रैवेयकोज्ज्वलमनोहरकम्बुकण्ठम् ॥

अर्थ—अधरपुट सिन्दूर की अपेक्षा से भी सुन्दर है, कर्पूर, कुन्दपुष्प, और मन्दार (देवतरुविशेष) पुष्पवत् शुक्ल मृदु हास्य है, उससे श्रीअङ्ग समुज्ज्वल है। नवकिशलय और कुसुमसमूह द्वारा रचित माल्यसमन्वित कण्ठभूषण से तदीय कण्ठप्रदेश सुशोभित है।

१० मत्तभ्रमरजुष्ट विलम्बमान—
सन्तानकप्रसवदामपरिष्कृतांसम् ।
हारावलीभगणराजितपीवरोरो–

व्योमस्थलीललितकौस्तुभभानुमन्तम् ॥

अर्थ-भ्राम्यमान मत्त अलिकुल के द्वारा सेवित विलम्बमान कल्पपुष्पमाला से जिनके स्कन्धद्वय अलङ्कृत हैं ; हारावलीरूप तारकासमूह से विराजित तदीय स्थूल वक्षस्थलरूप गगनमण्डल में मनोरम कौस्तुभरूप सूर्य समुद्भासित हो रहा है ।

११ । श्रीवत्सलक्षणसुलक्षितमुन्नतांश—
माजानुपीनपरिवृत्त सुजातबाहुम् ।
आबन्धुरोदरमुदारगभीरनाभिं-
भृङ्गाङ्गनानिकरमञ्जुलरोमराजिम् ॥

अर्थ—जो श्रीवत्स चिह्न से सुलक्षित और उन्नतांस है, जिनके आजानु—लम्बित स्थूल और सुवृत्त बाहुयुगल है, जठरप्रदेश इषत् उन्नतानत, नाभिप्रदेश प्रशस्त और सुगभीर एवं रोमराजि अलिपंक्ति के समान सुदृश्य है।

१२ । नानामणिप्रघटिताङ्गदकङ्कणोर्मि-
ग्रैवेयसारसननूपुरतुन्दबन्धम् ।
दिव्याङ्गरागपरिपिञ्जरिताङ्गयष्टि-
मापीतवस्त्रपरिवीतनितम्बविम्बम् ॥

अर्थ—तदीय अङ्ग में नानामणि द्वारा निर्मित अङ्गद, कङ्कण, कवच, रसना, नुपूर और कटिबन्धनार्थ सुवर्णरचित डोर विद्यमान है। तदीय अङ्ग-यष्टि(कलेवर)दिव्याङ्गराग से नानावर्ण विशिष्ट है, एवं नितम्बप्रदेश पीतवसन से परिवेष्ठित है ।

१३ । चारूरुजानुमनुवृत्तमनोज्ञजङ्घं-
कान्तोन्नतप्रपदनिन्दितकूर्मकान्तिम् ॥
माणिक्यदर्पणलसन्नखराजिराज-
द्रत्नाङ्गुलिच्छदनसुन्दरपादपद्मम् ॥

अर्थ-जिनका उरुदेश और जानु मनोरम है, जङ्घा सम्यक् अनुवृत्त और मनोज्ञ है, मनोरम उन्नत चरणप्रदेश कूर्माकृति की अपेक्षा से भी अत्युत्तम है, नख पङ्क्ति मणिमय दर्पण की अपेक्षा से भी शोभाविशिष्ट है । इस नखपंक्ति के द्वारा विराजित रत्नाङ्गुलिरूप पत्रसमूह तदीय चरणपद्मद्वय परमसुन्दर लग रहे है ।

१४ । मत्स्याङ्कुशारदरकेतुयवाब्जवज्र-
संलक्षितारुणकराङ्घ्रितलाभिरामम् ।

लावण्यसारसमुदायविनिर्म्मिताङ्ग–
सौन्दर्य्यनिर्ज्जितमनोभवदेहकान्तिम् ॥

अर्थ– अरुणित पदतल में मीन, अङ्कुश, चक्र, शङ्ख, ध्वज, यव और वज्रचिह्न विद्यमान रहने से वे अति मनोहर हैं। लावण्यसार के द्वारा विनिर्मित तदीय अङ्गसमूह का सौन्दर्य कामदेव की देहकान्ति कोभी पराजित कर रहा है।

१५। आस्यारविन्दपरिपूरितवेणुरन्ध्र,–
लोलत्करांगुलिसमीरितदिव्यरागैः।
शश्वद्द्रवीकृतविकृष्टसमस्तजन्तु,
सन्तानसन्ततिमनन्तसुखाम्बुराशिम् ॥

अर्थ–अनन्त सुखसमुद्र स्वरूप श्रीकृष्ण स्वीय मुखारविन्द मधु से वंशीछिद्र समूह को परिपूण करके इन छिद्रसमूह पर कराङ्गुलि चालन करते हुए दिव्यराग प्रकट करते हैं, उसके द्वारा समस्त प्राणी द्रवीभूत और समाकृष्ट हो जाते हैं।

१६। अथ सुललितगोपसुन्दरीणां पृथुनिविवीषनितम्बमन्थराणाम्।
गुरुकुचभरभंगुरावलग्न-त्रिवलिविजृम्भितरोमराजिभाजाम् ॥
१७। तदतिमधुरचारुवेणुवाद्यामृतरस-पल्लविताङ्गजाङ्घ्रिपानाम्।
मुकुलविसररम्यरूढ़रोमोद्गमसमलंकृतगात्रवल्लरीणाम् ॥
१८। तदतिरुचिरमन्दहासचन्द्रातपपरिजृम्भितरागवारिणाशेः।
तरलतरतरङ्गभङ्गविप्रुट्प्रकरसमश्रमविन्दुसन्ततानाम् ॥
१९। तदतिललितमन्दचिल्लिचापच्युतनिशितेक्षणमारवाणवृष्ट्या।
दलितसकलमर्म्मविह्वलाङ्गप्रविसृतदुःसहवेपथुव्यथानाम् ॥
२०। तदतिसुभगकम्ररूपशोभामृतरसपानविधानलालसाभ्याम्।
प्रणयसलिलपूरवाहिनीनामलसविलोचनाम्बुजाभ्याम् ॥
२१। विस्रंसत्कवरीकलापविगलत्फुल्लप्रसूनस्रव–
न्माध्वीलम्पटचञ्चरीकघटया संसेवितानां मुहुः।
मारोन्मादमदस्खलन्मृदुगिरामालोलकाञ्च्युच्छ्वस-
न्नीवीविश्लथमानचीनसिचयान्ताविर्नितम्बत्विषाम् ॥

२२। स्खलितललितपादाम्भोजमन्दाभिघात-
क्वणितमणितुलाकोट्याकुलाशामुखानाम् ।
चलदधरदलानां कुट्मलत्पक्ष्मलाक्षि-
द्वयसरसिरुहाणामुल्लसत्कुण्डलानाम् ।

२३। द्राघिष्ठश्वसन-समीरणाभितापप्रम्लानोभवदरुणोष्ठपल्लवानाम्,
नानोपायनविलसत्कराम्बुजानामालीभिःसततनिषेवितंसमन्तात् ॥

अर्थ—परममनोहरा गोपसुन्दरीगण चारों ओर वेष्टन कर सर्वदा उनकी सेवा करती हैं। वे सब सुपीन एवं निविड़ नितम्बभार से मन्थर है, उनके गुरुकुचभार से आनत मध्यप्रदेश त्रिवलि और रोमराजि से सुशोभित है। श्रीकृष्ण की अतिमधुर मनोहरवेणुवाद्यामृतरस से उनसभी के श्रीकृष्णविषयक कामतरु पल्लवित है, एवं उनकी अङ्गलता कुट्नलसमूह के तुल्य लोमोद्गम से समलङ्कृत है। श्रीकृष्ण के हास्यरूप चन्द्रकिरण से उनका अनुरागसागर परिवर्धित होकर चञ्चल तरङ्गमाला का विस्तार करता है। इस तरङ्गमाला के जलकण सदृश श्रमजनित घर्मविन्दु उनके अङ्ग में व्याप्त है। श्रीकृष्ण का परम मनोहर और विस्तृत भ्रू धनु से कटाक्षरूप तीक्ष्ण कामवाण वर्षण होते हैं, उससे इन समस्त गोपिकाओं का मर्मस्थल विदलित होकर अङ्ग में अवशता एवं असह्य काम वेदना उदय होती है। उनके अलस और चपल नेत्रपुञ्ज श्रीकृष्ण के निरतिशय परमकमनीय वस्तुकी अपेक्षा से भी परमकमनीय रूपसुधा रस पानार्थ व्याकुलित होकर प्रणयसलिल प्रवाह धारण करते हैं, प्रेम से उनके कबरी बन्धन श्लथ हो जाते हैं, और उनसे कुसुमपुञ्ज निपतित होने लगते हैं। उन समस्त पुष्पों से जो मकरन्द विगलित होती है, भ्रमरकुल उसके पान में लुब्ध होकर पुनः-पुनः उनकी सेवा करते हैं। प्रेमोन्माद से उनकी कोमलवाणी स्खलित होने लगती है, काञ्चीदाम चञ्चल होने से उनकी वसनग्रन्थी स्खलित होने लगती है, उससे नितम्ब की शोभा प्रकाशित होती है। वे स्खलित पाद-पद्म के द्वारा धरातल पर जो ईषत् आघात् करती हैं, उससे मणिमय नूपुरों की मनोरम ध्वनि समुत्थित होती है, इस ध्वनि से दिङ्मण्डल परिपूर्ण हो उठता है। उनके अधरपुट विकम्पित है, नेत्रपुञ्ज मुकुलित और दिव्यपक्ष्मों से विभूषित है, वे श्रवणपुट में दीप्तिशील कुण्डल धारण करती है, प्रेमानुभावरूप से वे जो अतिदीर्घ निःश्वास परित्याग करती हैं, उस निःश्वासानिल से उनके ओष्ठपल्लव म्लानता धारण कर लेते हैं। एवम्भूत गोपीगण के श्रीहस्त में नानाविध सेवोचार द्रव्य विद्यमान हैं।

२४। तासामायतलोलनीलनयनव्याकोषनीलाम्बुज-
स्रग्भिः संपरिपूजिताखिलतनुं नानाविनोदास्पदम्।
तन्मुग्धाननपङ्कजप्रविगलन्माध्वीरसास्वादिनीं
विभ्राणं प्रणयोन्मदाक्षिमधुकृन्मालां मनोहारिणीम्॥

अर्थ—इन गोपिकाओं के विस्तृत चपल नेत्ररूप नीलपद्ममाला से श्रीकृष्ण सम्यक् पूजित होकर विविध विनोदास्पद होते हैं। तदीय नेत्रभ्रमर भी प्रेम-मद से उन्मत्त होकर गोपीगण के सलज्ज वदनकमल से क्षरिता मधुधारा पान में निरत रहता है। श्रीकृष्ण उनके मनोहर प्रणयोन्मत्त नयन मधुकर-माला का ध्यान करके परम शोभा पा रहे हैं।

२। अथ मानसोपचारैः पाद्य-गन्ध-धूप-दीप-नैवेद्याचमनताम्बूल गन्धमाल्यादिभिः पूजयेत्। ततो वहिर्नानाव्यञ्जनघृतशाल्यन्नादिकं मूलमन्त्रेणार्पयित्वा द्वारे कवाटं दत्वा वहिर्गच्छेत्। ततो भोजन-विज्ञप्तिं पठेत्।

अर्थ—मध्याह्नकालीन ध्यानानन्तर पाद्य, गन्ध, धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन ताम्बूल और गन्धमाल्यादि मानसोपचार से पूजा करे। मानस पूजा के वाद श्री मूर्त्ति को नानाविध व्यञ्जन एवं घृतसिक्त शाल्यान्नादि मूल मन्त्र से अर्पण करके द्वार का कपाट देकर बाहर भोजन विज्ञप्ति पाठ करे। यथा—

१। द्विजस्त्रीणां भक्ते मृदुनि विदुरान्ने व्रजगवां
दधिक्षीरे सख्युः स्फुटचिपिटमुष्टौ मुररिपो।
यशोदायाः स्तन्ये व्रजयुवतीदत्ते मधुनि ते
यदासीदामोदस्तमयमुपहारोऽपि कुरुताम्॥

२। या प्रीतिर्विदुरार्पिते मुररिपो कुन्त्यर्पिते यादृशी।
या गोवर्द्धनमूर्द्ध्नि या च पृथुके स्तन्ये यशोदार्पिते।
भारद्वाजसमर्पिते शवरिकादत्तेऽधरे योषितां
या वा ते मुनिभाविनीविनिहितेऽन्नेऽत्रापि तामर्पय॥

३। क्षीरे श्यामलयार्पिते कमलया विश्राणिते फाणिते
दत्ते लड्डुनि भद्रया मधुरसे सोमाभया लम्भिते।
तुष्टिर्या भवतस्ततः शतगुणाः राधानिदेशान्मया

न्यस्तेऽस्मिन् पुरतस्त्वमर्पय हरे रम्योपहारे रतिम् ॥

अर्थ—हे मुररिपो ! याज्ञिकब्राह्मणीगण चतुर्विधान्न से, श्रीविदुर के अल्प परिमाण अन्न से, व्रजस्थ गायों के दधिदुग्ध से, सखा श्रीदाम विप्र की चिपिटक मुष्टि से, श्रीयशोदा के स्तन-दुग्ध से, एवं श्रीराधा प्रभृति व्रजयुवतीगण के द्वारा दत्त मधुरसास्वाद्य यत्किञ्चित् वस्तु से, जैसे आपको सुखविशेष होता है, उसी प्रकार मद्दत्त उपहार से भी आप आमोद प्रकाश करें।

२। हे मुररिपो ! विदुरार्पित अन्न से, कुन्तिदत्त अन्न से, श्रीगोवर्द्धन मस्तक पर फलमूलादिरूप अन्न से, श्रीयशोदार्पित प्रचुर स्तन्य से, भरद्वाज के समर्पित अन्न से, शवरिका दत्त अन्न से, श्रीराधादि व्रजाङ्गनागण के अधरों से एवं मुनिपत्नियों के अर्पित अन्न से, आपकी जैसी प्रीति होती है, वैसी प्रीति ही इस अन्न के प्रति अर्पण करो।

३। श्यामा को अर्पित क्षीर से, कमला के दत्त फेनि-वातासा से, भद्रा दत्त लड्डु से, एवं चन्द्रावली दत्त मधुरस से, आपको जैसी अतिशय प्रीति होती है, हे हरे ! आपकी परम प्रेयसी श्रीराधा के आदेश से मैं जो उपहार आपके समक्ष उपस्थित करता हूँ, इस मनोहर भोज्यद्रव्य में पूर्वापेक्षा शतगुण प्रीति अर्पण करो ।

ततस्तालिवादनैर्द्वारमुद्घाट्याचमनं दत्वा ताम्बूलमर्पयेत् । ततो राजोपचारारात्रिकं पूर्व्ववत् कृत्वा सजलशङ्खं भ्रामयित्वा प्रयत्नतः देवं स्वापयेत् । ततो द्वारे कवाटं दत्वा वहिर्निर्गत्यासनोपरि पूर्व्वाभिमुखो उपविश्य स्वमन्त्रं जपेत् ।

अर्थ—तत्पश्चात् हाथ से ताली बजाकर द्वारोद्घाटन करके आचमन दान पूर्वक ताम्बूलार्पण करे। अतःपर राजोपचार से पूर्ववत् (निशान्तकृत्य में उक्त आरती विधि की भाँति) आरती करके सजलशङ्ख घुमाकर यत्नपूर्वक श्रीमूर्त्ति को शयन करावे। अनन्तर द्वार का कपाट बन्द करके बाहर आकर आसनोपरि उपवेशन करके स्वमन्त्र का जप करे।

३। ततो मध्याह्नलीला स्मरणम्—

तत्रादौ गौरचन्द्रस्य (भावनासारसंग्रहे)—

सहालिश्रीराधासहितहरिलीलां वहुविधां
स्मरन्मध्याह्नीयां पुलकिततनुर्गद्गदवचाः ।
व्रुवन् व्यक्तं ताञ्च स्वजनगणमध्येऽनुकुरुते
शचीसूनुर्यस्तं भज मम मनस्त्वं वत सदा ॥

अर्थ— श्रीशचीनन्दन ससखी श्रीराधा के सहित श्रीहरि को वहुप्रकार माध्याह्निकी लीला स्मरण करते-करते पुलकितगात्र से और गद्‌गद्‌वाक्य से स्वजनगण मध्य में इस लीला का कीर्त्तन और अनुकरण करते रहते हैं। हे मन ! तुम उनका ही भजन करो।

७। स्मरणमङ्गले—

मध्याह्नेऽन्योऽन्यसङ्गोदितविविधविकारादिभूषाप्रमुग्धौ
वाम्योत्कण्ठातिलोलौ स्मरमखललिताद्यालिनर्म्माप्तशातौ
दोलारण्याम्बुवंशीहृतिरतिमधूपानार्कपूजादिलोलौ
राधाकृष्णौसतृष्णौ परिजनघटयासेव्यमानौ स्मरामि ॥इति

अर्थ— मध्याह्नकाल में जो परस्पर सङ्गजनित विविध विकार (अष्ट-सात्त्विक) प्रभृति भावभूषणों से अति मनोहर वाम्य और उत्कण्ठा से अतिशय चञ्चल कन्दर्पयज्ञ में ललितादि सखीगण के परिहास वाक्य से सुखप्राप्त होते हैं, एवं दोलालीला, वनविहार, जलक्रीड़ा, वंशीहरण, रमण, मधुपान, और सूर्य-पूजादि लीला करके तद्‌विषय में सतृष्ण रहते हैं। परिजनगण के द्वारासेवित उन राधाकृष्ण का मैं स्मरण करता हूँ।

सनत्कुमारसंहितायाम्— अर्थात् सनत्कुमार संहिता में भी श्रीराधाकृष्ण की माध्याह्निकी लीला वर्णित है।

५। तत उत्थाय चतुर्व्वारं प्रदक्षिणं कृत्वा श्रीतुलसीं पूर्व्ववत् संपूज्य श्रीगुर्व्वादीन् दण्डवत् प्रणमेत्। ततश्च (भा-१०।४७।६१)—

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां,
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ;
या दुस्त्यजं स्वजनमार्य्यपथञ्चहित्वा,
भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥

इति पठित्वा व्रजधूलिसेवनं कुर्य्यात्। ततश्च—

अर्थ—आसन से उठकर चारवार तुलसी प्रदक्षिण और पूर्ववत् तुलसी को पूजा करके श्रीगुरु प्रभृति को दण्डवत् प्रणाम करे। तदनन्तर "आसामहो" श्लोक का पाठ करे। अर्थ— श्रीउद्धव महाशय ने कहा था—ये व्रजदेविगण दुस्त्यज स्वजन और आर्यपथ का परित्याग करके वेद के अन्वेषणीय श्रीगोविन्द पदवी का भजन किये हैं। अहो वृन्दावन के गुल्म, लता और औषधिगण उनकी चरणरेणु सेवन करके धन्य हो गयी हैं। मैं भी उनमें से

किसी एक गुल्मलतादि का जन्म प्राप्त कर सकूँ। इस श्लोक का पाठ करके व्रजधूलि सेवन करनी चाहिए।

अकालमृत्युहरणं सर्व्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णुपादोदकं पित्वा शिरसा धारयाम्यहम्॥

इति पठित्वा चरणामृतं पित्वा किञ्चित् स्वशिरसि धारयेत्।

इस श्लोक का पाठ करके चरणामृत पान करे, और किञ्चित् मस्तक पर धारण करे।

रुदन्ति पातकाः सर्व्वे निःश्वसन्ति मुहुर्मुहुः।
हा हा कृत्वा पलायन्ते जगन्नाथान्नभक्षणात्॥
प्रसादमन्नं तुलसीविमिश्रं विशेषतः पादजलेन सिक्तम्।
योऽश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः, प्राप्नोति यज्ञायुतकोटिपुण्यम्।

इति पठित्वा महाप्रसादान्नं भुञ्जीत ; तत आचमनादिकं कुर्य्यात्।

अर्थ—तत्पश्चात् महाप्रसाद की महिमा पाठ करे। श्रीविष्णु के निवेदित अन्न भक्षण से समस्त पातक मुहुर्मुहुः निःश्वास त्यागपूर्वक रोदन करते हैं, एवं हाहाकार करके पलायन करते हैं। जो तुलसी समन्वित विष्णुनिवेदितान्न विशेषतः चरणामृत से सिक्त करके प्रत्यह भक्षण करता है, वे सहस्र कोटि यज्ञ का पुण्यलाभ करता है। इस प्रकार पाठ करके महाप्रसादान्न का भोजन करे, तत्पश्चात् आचमन करे।

इति मध्याह्न कृत्यम्

❋ इति श्रीसाधनामृत चन्द्रिकायां चतुर्थः प्रकाशः ❋

❋ श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का चतुर्थ प्रकाश समाप्त ❋



(पञ्चमः प्रकाशः)

१। अथ अपराह्लकृत्यम्—तत्र संख्यानिबद्ध श्रीनामग्रहणं श्रीभागवतादिभक्तिशास्त्रश्रवणादिकर्त्तव्यम् ।

अर्थ—अपराह्न समय में संख्यानिबद्ध श्रीनामग्रहण और श्रीभागवतादि भक्तिशात्र श्रवणादि कर्त्तव्य है ।

अथापराह्णलीलास्मरणम् । तत्रादौ गौरचन्द्रस्य (भावनासार-संग्रहे)—परावृत्ति गोष्ठे व्रजनृपतिसूनोर्विपिनतो

महानन्दाम्भोधेः सपदि जनयित्रीं स्वहृदये ।

स्मरन् श्रीगौराङ्गो नटति वलते निःश्वसिति च

क्षणं मुह्यन् सर्व्वान् विवशयति यस्तं भज मनः ॥

अर्थ–अपराह्न में श्रीशचीनन्दनगौराङ्ग श्रीकृष्ण के वन से गोष्ठ में महानन्द सागरोत्पादिका प्रत्यागमन लीला स्मरण करते-करते नृत्य करते हैं। उत्कण्ठा प्रकाश करते हैं, निःश्वास त्याग करते हैं, एवं एकक्षण मूर्च्छा प्राप्त होकर भक्तों को विवश कर देते हैं, एवम्भूत श्रीगौराङ्ग का हे मन ! भजन कर।

२ । स्मरणमङ्गले—

श्रीराधां प्राप्तगेहां निजरमणकृते क्लृप्तनानोपहारां

सुस्नातां रम्यवेशां प्रियमुखकमलालोकपूर्णप्रमोदाम् ।

कृष्णं चैवापराह्ले व्रजमनुचलितं धेनुवृन्दैर्वयस्यैः

श्रीराधालोकतृप्तं पितृमुखमिलितं मातृमृष्टं स्मरामि ।

अर्थ—अपराह्न में श्रीराधिका स्वगृह में गमनपूर्वक स्नान करके वेषभूषण परिधान कर निजरमण श्रीकृष्ण के निमित्त कर्पूर केलि और अमृत केलि लड्डू प्रभृति नानाविधोपहार प्रस्तुतकरती हैं, एवं वन से गोष्ठ आगमन समय ये प्रियतम के वदन दर्शन से पूर्णानन्द प्राप्त करती हैं। श्रीकृष्ण भी धेनुवृन्द और वयस्यगण के सहित व्रजागमन पथ में श्रीराधिका के दर्शन करके परम तृप्ति लाभ करते हैं, पिता प्रभृति के साथ मिलकर, मातृगण से स्नानादि के द्वारा तृप्त होते हैं, ऐसे श्रीराधाकृष्ण का मैं स्मरण करता हूँ।

सनत्कुमारसंहितायाञ्च— अर्थात् सनत्कुमार संहिता में भी इसी प्रकार अपराह्न लीला का वर्णन है।

❋ इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां पञ्चमः प्रकाशः ❋

❋ श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का पञ्चम प्रकाश समाप्त ❋



(षष्ठः प्रकाशः)

१। अथ सायाह्णकृत्यम्—

ततः पूर्व्ववत् सायाह्णस्नानतिलकादिकं कृत्वा द्वारमुद्—घाट्य श्रीदेवमुत्थाप्याचमनं दत्वा किञ्चिद्भोजयित्वा चारात्रिकञ्च कुर्य्यात् ।

अर्थ— दिनान्त में पूर्ववत् स्नान और तिलकादि करके श्रीमन्दिर का द्वारोद्घाटन पूर्वक श्रीयुगलमूर्त्ति का उत्थापन करके आचमन देवें और किञ्चित् भोग देकर आरती करे ।

ततः सायाह्नलीलास्मरणम् । तत्रादौ गौरचन्द्रस्य (भावनासार-संग्रहे)—सायन्तनीं कृष्णमनोज्ञलीलां,स्नानाशनाद्यां हि मुहुर्विचिन्त्य ।
स्वभक्तमध्येऽनुकरोति नित्यं, तां यो मनस्तं भज गौरचन्द्रम् ।।

अर्थ— जो श्रीकृष्ण की स्नान भोजनादि मनोहारिणी सायन्तनी लीला पुनः पुनः स्मरण करके स्वभक्तगण के मध्य में नित्य इस लीला का अनुकरण करते है, हे मन ! उन गौरचन्द्र का भजन करो ।

२ , स्मरणमङ्गले—

सायं राधां स्वसख्या निजरमणकृते प्रेषितानेकभोज्यां
सख्यानीतेशशेषाशनमुदितहृदं ताञ्च तञ्च व्रजेन्दुम् ।
सुस्नातं रम्यवेशं गृहमनु जननीलालितं प्राप्तगोष्ठं
निर्व्यूढ़ोस्रालिदोहं स्वगृहमनु पुनर्भुक्तवन्तं स्मरामि ॥ इति ।

अर्थ—जो सायंकाल में निजरमण श्रीकृष्ण के निमित्त निजसखी के द्वारा नानाविध भोज्यपदार्थ प्रेरण करती हैं, एबं सखीगण के द्वारा आनीत श्रीकृष्ण का भुक्तावशेष भोजन करके जो प्रसन्नचित्त होती हैं, उन श्रीराधिका का एवं सुस्नात, रम्यवेषधारी, गृह में जननी से संलालित होकर जो गोष्ठ में गमन करते हैं, वहाँ गोदोहन क्रिया समाप्त करके पुनः गृह में आकर भोजन करते हैं, उन श्रीकृष्ण का भी मैं स्मरण करता हूँ ।

सनत्कुमारसंहितायाञ्च — अर्थात् सनत्कुमार संहिता में भी इसी प्रकार सायन्तनी लीला उल्लिखित है ।

❋ इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां षष्ठः प्रकाशः ❋

❋ श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का षष्ठ प्रकाश समाप्त ❋



(सप्तमः प्रकाशः)

अथ प्रदोषकृत्यम् । तत्र प्रदोषलीलास्मरणम्—

१ । तत्रादौ गौरचन्द्रस्य (भावनासारसंग्रहे)—

समुत्कण्ठासन्ना कलितहरिवार्त्ता वत यथा-
भिसृत्यासौ राधा हरिमपि निकुञ्जे गतवती ।
तथात्मानं मत्वा कटिनिहितपाणिर्विशति च
स्खलन् गच्छन् गौरो नटति धृतकम्पाश्रुपुलकः ।। इति ।

अर्थ—अनन्तर प्रदोषकृत्य लिखते हैं—इस कृत्य में लीलास्मरण निम्नोक्त रूप है । प्रथम श्रीगौरचन्द्र की लीलास्मरण । जिस प्रकार श्रीराधिका प्रदोष काल में श्रीहरि की वार्त्ता श्रवण कर समुत्कण्ठा से निकुञ्ज में श्रीहरि के प्रति अभिसार करती हैं: उसी प्रकार श्रीगौरचन्द्र अपने को श्रीराधा मानकर कटि पर हस्त स्थापन कर स्खलित गति से (प्रदोषकालीन निकुञ्जाभिसार ज्ञान से) श्रीवास की वाटिका में प्रवेश करते हैं, एवं वैसा ही भक्तगण के मध्य में श्री-गौरचन्द्र कम्प, अश्रु, पुलक से शोभित होकर नृत्य करते हैं ।

२ । स्मरणमङ्गले—

राधां सालिगणां तामसितसितनिशायोग्यवेशां प्रदोषे
दूत्या वृन्दोपदेशादभिसृतयमुनातीरकल्पागकुञ्जाम् ।
कृष्णं गोपैः सभायां विहितगुणिकलालोकनं स्निग्धमात्रा
यत्नादानीय संशायितमथ निभृतं प्राप्तकुञ्जं स्मरामि ।।

अर्थ— प्रदोषकाल में श्रीराधा कृष्णपक्ष और शुक्लपक्षीय रजनी के उपयुक्त कृष्णवर्ण और श्वेतवर्ण वस्त्रादिरचित वेशधारणपूर्वक सखीगण के साथ श्रीवृन्दादेवी के उपदेशानुसार दूती के सहित यमुनातीरस्थ कल्पवृक्ष सुशोभित कुञ्ज में अभिसार करती हैं । इधर श्रीकृष्ण भी गोपगण के सहित सभा मध्य में गुणियों के द्वारा प्रस्तुत नृत्य कलादि अवलोकन करके स्नेहमयी जननी के आदेश से सभा से आकर शय्या पर कुछ क्षण शयन करते हैं, एवं गुप्तरूप से संकेतकुञ्ज में गमन कर श्रीराधा के साथ मिलते हैं ।

सनत्कुमारसंहितायाञ्च—सनत्कुमार संहिता में भी इस प्रकार प्रदोषलीला वर्णित है ।

३ । ततश्च यथाशक्ति अन्नव्यञ्जनादिकमिष्टान्नदुग्धसुवासितजला-

दिकं देवं भोजयित्वा आचमनं दत्त्वा ताम्बूलं समर्प्यारात्रिकं कुर्य्यात् ।

ततश्च— गोविन्द परमानन्द योगनिन्द्रां वितन्यताम् ।

राधया पुष्पशय्यायां दासीगणनिषेवितः ॥

इतिमन्त्रं पठित्वा देवं स्वापयेत् । ततश्च वहिर्निर्गत्य द्वारमावृत्य प्रणमेत् ।

अर्थ— अनन्तर शक्ति के अनुरूप अन्नव्यञ्जनादि और मिष्टान्न, दुग्ध एवं सुवासित जलादि युगल मूर्ति को समर्पण करे, भोजन कराकर आचमन देकर ताम्बूल समर्पण पूर्वक आरती करें। अनन्तर— हे परमानन्द ! गोविन्द ! आप दासीगण से निषेवित होकर श्रीराधा के साथ पुष्पशय्या पर योगनिद्रा अङ्गीकार करो। इस मन्त्रका पाठ करके श्रीयुगलमूर्त्ति को शयन करावे। अनन्तर मन्दिर से बाहर आकर द्वार देकर प्रणाम करे।

* इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां सप्तमः प्रकाशः *

* श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का सप्तम प्रकाश समाप्त *



(अष्टमः प्रकाशः)

अथ निशाकृत्यम् ; तत्र निशालीलास्मरणम्—

१। तत्रादौ गौरचन्द्रस्य (श्रीभावनासारसंग्रहे)—

श्रीश्रीवासगृहे मुदा परिवृतो भक्तैः स्वनामावलीं
गायद्भिर्गलदश्रुकम्पपुलको गौरो नटित्वा प्रभुः ;
पुष्पारामगते सुरत्नशयने ज्योत्स्नायुतायां निशि
विश्रान्तः स शचीसुतः कृतफलाहारो निषेव्यो मम ॥

अर्थ— प्रदोषकृत्यानन्तर निशाकृत्य ,— इस कृत्य में निशालीला स्मरणीय है। प्रथम श्रीगौरचन्द्र की निशालीला। ज्योत्स्नावती निशा में जो श्रीकृष्णनाम कीर्त्तनरत भक्तगण के साथ मिलित होकर प्रेमानन्द से नृत्य कर अश्रु, कम्प, रोमाञ्चादि से शोभित होते हैं, एवं श्रीवासालय में फलाहार करके पुष्पाराम में उत्तम शय्या पर विश्राम करते हैं, उन प्रभु गौरचन्द्र की मैं सेवा करता हूँ।

२। स्मरणमङ्गले—

तावुत्कौ लब्धसङ्गौ वहुपरिचरणैर्वृन्दयाराध्यमानौ
गानैर्नर्म्मप्रहेलीलपनसुनटनै रासलास्यादिरङ्गैः।
प्रेष्ठालिभिर्लसन्तौ रतिगतमनसौ मृष्टमाध्वीकपानौ
क्रीड़ाचार्य्यौ निकुञ्जे विविधरतिरणौद्धत्यविस्तारितान्तौ ॥
ताम्बूलैर्गन्धमाल्यैर्व्यजनहिमपयःपादसम्बाहनाद्यैः
प्रेम्णा संसेव्यमानौ प्रणयिसहचरीसञ्चयेनाप्तशातौ।
वाचा कान्तैरणाभिर्निभृतरतिरसैः कुञ्जसुप्तालिसंघैः (-संघौ)
राधाकृष्णौ निशायां सुकुसुमशयने प्राप्तनिद्रौ स्मरामि ॥

अर्थ—परस्पर मिलन के लिए उत्कण्ठित श्रीराधागोविन्द निशा में मिलित होने पर, श्रीवृन्दादेवी बहुप्रकार सेवोपकरणों से दोनों की आराधना करती है, प्रिय सखीगण के साथ गान, परिहास, प्रहेली, रसालाप, सुनटनयुक्त रास-विलासादि रङ्ग में माधुर्य प्रकाश करके श्रीयुगल किशोर रतिगतचित्त के हेतु शुद्ध मधुर-रस पान में प्रवृत्त होते हैं। तत्पश्चात् दोनों क्रीड़ाचार्य निकुञ्ज में विविध रतिरण में औद्धत्य विस्तार करते हैं, एव प्रणयसहचरीगण के द्वारा ताम्बूल, गन्धमाल्य, व्यजन, हिमाम्बु, और पादसम्वाहनादि के द्वारा प्रेम से

सेवित होकर परमानन्द को प्राप्त करते हैं। श्रीराधा की प्रेरणा से श्रीकृष्ण-सह सखीगण का निभृत रतिरस भोग। अनन्तर श्रीराधाकृष्ण के शयन करने पर कुञ्ज में सखीगण भी शयन करती हैं। निशा में सुकुसुम शय्या पर निद्रित श्रीराधाकृष्ण का मैं स्मरण करता हूँ।

सनत्कुमारसंहितायाञ्च— अर्थात् सनत्कुमार संहिता में भी इस प्रकार रति-विलास वर्णित हैं।

※ इति श्रीसाधनामृतचन्द्रिकायां अष्टमः प्रकाशः ※

※ श्रीसाधनामृत चन्द्रिका का अष्टम प्रकाश समाप्त ※











अथ लालसामयानि पद्यानि पठेत् ; यथा—(उत्कण्ठामालिकायाम्)

अनन्तर लालसामय पद्य समूह का पाठ करे—

श्रीरूपमञ्जरि सुमञ्जुलकञ्जनेत्रे !
कारुण्यपात्रि गुणमञ्जरि मञ्जुलालो !
कस्तूरिके ! तुलसीके ! रसमञ्जरीति
वक्ष्ये कदा व्रजवनस्य वसन् निकुञ्जे ॥

अर्थ— मैं व्रजवन के निकुञ्ज में वास करते करते हे सुमनोहर नयने श्रीरूपमञ्जरि ! हे कारुण्य पात्रि गुणमञ्जरि ! हे मञ्जुलालि ! हे कस्तुरिके ! वे तुलसिके ! हे रसमञ्जरि ! इस प्रकार नाम ग्रहण करके कब आह्वान करूँगा

श्रीलविश्वनाथठक्कुरकृत—श्रीसंकल्पकल्पद्रुमे (६२-६४)—

हे मञ्जुलालि ! निजनाथ पादाब्जसेवा-
सातत्यसम्पदतुलासि मयि प्रसीद ।
तुभ्यं नमोऽस्तु गुणमञ्जरि ! मां दयस्व-
मामुद्धरस्व रसिके रसमञ्जरि त्वम् ॥
हे भानुमत्यनुपमप्रणयाब्धिमग्ना-
स्वस्वामिनोस्त्वमसि मां पदवीं नय स्वाम् ।
प्रेमप्रवाहपतितासि लवङ्गमञ्ज-
र्य्यात्मीयतामृतमयीमयि धेहि दृष्टिम् ॥
हे रूपमञ्जरि ! सदासि निकुञ्जयुनोः,
केलिकलारसविचित्रितचित्तवृत्तिः ।
स्वदत्तदृष्टिरपि यत् समकल्पयन्तत्-
सिद्धौ तवैव करुणा प्रभुतामुपेतु ॥

अर्थ— हे मञ्जुलालि ! आप सर्वदा निजनाथ श्रीराधाकृष्ण की पादपद्म सेवा की अतुलसम्पद्स्वरूपा हैं, मेरे प्रति प्रसन्न होओ। हे गुणमञ्जरि ! आपको नमस्कार करता हूँ, मेरे प्रति कृपा करो। हे रसिके रसिकमञ्जरि ! मेरा उद्धार करो। हे भानुमति ! आप स्वामी और स्वामिनी के प्रणय-सागर में निमग्ना हैं, मुझको निज-आदर्श प्राप्त कराओ। हे लवङ्गमञ्जरि ! आप प्रेम-प्रवाह में निमग्ना हैं, एकवार मेरे प्रति आत्मीय भाव से दृष्टि प्रदान करो।

हे रूपमञ्जरि ! श्रीराधाकृष्ण के केलिकलारस में आपकी चित्तवृत्ति रञ्जित रहती हैं। आपके द्वारा प्रदत्त दृष्टि पाकर मैंने जो संकल्प किया है, उसकी सिद्धि के लिए आपकी करुणा ही एकमात्र अवलम्बनीय है।

श्रीश्रीस्तवावल्याम्–(स्वसङ्कल्पप्रकाशस्तोत्रे ३-११)—

श्रीरूपमञ्जरी के निकट लालसामयी प्रार्थना—

अलं मानग्रन्थेर्निभृतचटुमोक्षाय निभृतं
मुकुन्दे हा हेति प्रथयति नितान्तं मयि जने।
तदर्थं गान्धर्व्वाचरणपतितं प्रेक्ष्य कुटिलं
कदा प्रेमक्रौर्य्यात् प्रखरललिता भर्त्सयति माम् ॥

अर्थ— श्रीकृष्ण श्रीराधा की निष्कारण मानग्रन्थि मोक्ष के लिए हाहाकार करके अर्थात् विनय युक्त दुःख प्रकाश करके मेरे निकट उसी मान की वात खोलकर कहने से मैं मानभङ्ग के लिए श्रीराधा के श्रीचरणों में गिरपड़ा यह देखकर प्रेमकौटिल्यवश प्रखरा ललिता कुटिल दृष्टि से मुझको कब भर्त्सना करेंगी ?

मुदा वैदग्धयान्तर्ललित-नवकर्पूरमिलन–
स्फुरन्नानानर्म्मोत्कर-मधुरमाध्वीकरचने।
सगर्व्वं गान्धर्व्वा- गिरिधरकृते प्रेमविवशा
विशाखा मे शिक्षां वितरतु गुरुस्तद्युगसखी ॥

अर्थ—युगलकिशोर की प्रेमविवशा सखी विशाखा, गुरु अर्थात् शिक्षयित्री होकर अतिगर्व्व से मुझको श्रीराधाकृष्ण के आनन्दसम्पादनार्थ स्व-स्व योग्य मधुर रस की परिपाटी समूह की रचना के लिए सहर्ष शिक्षा प्रदान करें। इसमें युगल के सुखदायक चातुर्ययुक्त विविध परिहास वाक्य, ललितनवकर्पूर-मिश्रित मधु के समान स्फुरित होवें।

कुहूकण्ठीकण्ठादपि कमनकण्ठी मयि पुन-
र्विशाखा गानस्यापि च रुचिरशिक्षां प्रणयतु।
यथाहं तेनैतद्युवयुगलमुल्लास्य सगणा-
ल्लेभे रासे तस्मान्मणिपदकहारानिह मुहुः ॥

अर्थ—कोकिला के कण्ठ की अपेक्षा अतिकमनीयकण्ठी वह विशाखा सखी पुनर्वार मुझको गान विषय में मनोहर शिक्षा प्रदान करें, जिससे मैं उस गान के द्वारा ही सगण श्रीराधाकृष्ण से इस रासस्थली पर मणियुक्तपदक और हार

पारितोषिक रूप में वारम्वार लाभ करता रहूँ ।

क्वचित् कुञ्जे कुञ्जे छलमिलितगोपालमनु तां
मदीशां मध्याह्ने प्रियतरसखीवृन्दवलिताम् ।
सुधाजैत्रैरन्नैः पचनरसविच्चम्पकलता-
कृतोद्यच्छिक्षोऽहं जन इह कदा भोजयति भोः ॥

अर्थ—हे रूपमञ्जरी ! पाकरचना कर्म में अतिविचक्षणा श्रीचम्पकलता से पाकक्रिया शिक्षा करके क्वचित् मध्याह्न समय में गोचारणच्छल से मिलित श्रीकृष्ण को और तत्पश्चात् स्वसखीवृन्दसह मदीशा श्रीराधा को कुञ्ज में सुधाजयी अन्न, कब भोजन कराउँगा ।

क्वचित् कुञ्जक्षेत्रे स्मरविषमसंग्रामगरिम-
क्षरच्चित्रश्रेणीं व्रजयुवयुगस्योत्कटमदैः ।
विधत्ते सोल्लासं पुनरसमयं पर्णकचयै-
र्विचित्रं चित्रातः सखि ! कलितशिक्षोऽप्यनु जनः ॥

अर्थ— हे सखि रूपमञ्जरि ! किस कुञ्ज में व्रजयुवायुगल के मधुपान द्वारा अत्यन्त मत्ततावशतः विषम कन्दर्प समर की गरिमा से श्रीअङ्गस्थ खचित चित्रश्रेणी विगलित होने पर जो जन, चित्रा सखी के निकट से विचित्र चित्र रचना शिक्षा कर चुका है, वह इस बिगलित चित्रश्रेणी की पुनर्वार अतिशय रूप से रचना करेगा ?

परं तुङ्गाद्या यौवतसदसि विद्याद्भुतगुणैः
स्फुटं जित्वा पद्माप्रभृति-नवनारीर्भ्रमति या ।
जनोऽयं सम्पाद्यः सखि विविधविद्यास्पदतया
तया किं श्रीनाथाच्छलनिहितनेत्रेङ्गितलवैः ॥

अर्थ— हे सखि रूपमञ्जरि ! अद्भुत विद्यागुण में पद्माप्रभृति नारीगण को पराभूत करके युवतीयों की सभा में जो भ्रमण करती हैं, वह तुङ्गविद्या सखी श्रीराधा के द्वारा छलनिक्षिप्त इङ्गित को पाकर मुझको विविध विद्या का आस्पद क्या करेंगी ?

स्फुरन्मुक्तागुञ्जामणि-सुमनसां हाररचने
मुदेन्दोर्लेखा मे रचयतु तथा शिक्षणविधिम् ।
यथा तैः संक्लप्तैर्दयितसरसीमध्यसदने

स्फुटं राधाकृष्णावयमपि जनो भूषयति तौ ॥

अर्थ— प्रकाशमान मुक्ता, गुञ्जा, मणि एवं कुसुम के हार निर्माण विषय में श्रीइन्दुलेखा मुझको वैसी ही शिक्षा प्रदान करें, जिससे यह जन श्रीराधा-कुण्डतीरस्थ सदन में श्रीराधाकृष्ण को हारसमूह से भूषित कर सके।

अये पूर्व्वं रङ्गेत्यमृतमयवर्णद्वयरस-
स्फुरद्देवीप्रार्थ्यं नटनपटलं शिक्षयति चेत्।
तदा रासे दृश्यं रसवलितलास्यं विदधतो
स्तयोर्वक्त्रे युञ्जे नटनपटुवीटिं सखि मुहुः ॥

अर्थ—'रङ्ग' यह अमृतमय वर्णयुगल पूर्व में रहकर रसको स्फुरण कराने में जो देवी अर्थात् रस से द्योतमाना हैं, वह रङ्गदेवी सखी, मुझको मेरा प्रार्थनीय नृत्य-समूह शिक्षादान करें, उससे मैं रास के समय नृत्यकारी श्रीराधाकृष्ण के वदन में नृत्य करते करते सुदृश्य एवं सुरस्य ताम्बूल वीटिका प्रदान कर सकूँ।

सदक्षक्रीड़ानां विधिमिह तथा शिक्षयितु सा
सुदेवी मे दिव्यं सदसि सुदृशां गोकुलभुवाम्।
तयोर्द्वन्द्वे खेलामथ विदधतोः स्फूर्ज्जति तथा
करोमि श्रीनाथां सखि विजयिनीं नेत्रकथनैः ॥

अर्थ—हे सखि रूपमञ्जरी ! श्रीसुदेवी गोकुलसुन्दरीगण की सभा में आप मुझको दिव्यपाशाखेल की विधि की उसी प्रकार शिक्षा प्रदान करें, जिससे मैं युगलकिशोर के पाशा खेलने में परस्पर जय इच्छुक होने पर, नेत्र के इङ्गित से श्रीराधा को ही विजयिनी करा सकूँ।

श्रीश्रीस्तवमालायाम् (श्रीश्रीगान्धर्व्वासंप्रार्थनाष्टकम् २)—

हा देवि काकुभरगद्गदयाद्य वाचा,
याचे निपत्य भुवि दण्डवदुद्भटार्त्तिः।
अस्य प्रसादमबुधस्य जनस्य कृत्वा,
गान्धर्व्विके निजगणे गणनां विधेहि ॥

अर्थ—हे देवि गान्धर्विके ! मैं भूमि पर दण्डवत् निपतित होकर अतिशय काकुस्वर से और गद्गद् वाक्य से एवं अत्यन्त आर्त्ती के साथ आपके श्रीचरणों में प्रार्थना करता हूँ कि—मैं अज्ञजन हूँ, मेरे प्रति प्रसन्न होकर निज गण में मेरी भी गणना करो।

(उत्कलिकावल्लरिः ५२)—

कदाहं सेविष्ये व्रततिचमरीचामरमरुद्-
विनोदेन क्रीड़ाकुसुमशयने न्यस्तवपुषौ ।
दरोन्मीलन्नेत्रौ श्रमजलकणक्लिद्यदलकौ
ब्रुबाणावन्योन्यं व्रजनवयुवानाविह युवाम् ॥

अर्थ—हे व्रजनवयुवा श्रीकृष्ण ! हे व्रजनवयुवती श्रीराधा ! आप क्रीड़ा-कुसुम शय्या पर नयनयुगल ईषत् उन्मीलन करके परस्पर आलाप करते-करते शयन करेंगे। इस समय आपकी अलकावली को श्रमजलकणों से आर्द्रीभूत देखकर मैं लतासमूह से जात मञ्जरीरूप चामर-विनोद के द्वारा कब आपकी व्यजन सेवा करूँगी ?

श्रीवृन्दावनशतके (१७।३)—

गुणैः सर्व्वैर्हीनोऽप्यहमखिलजीवाधमतमो-
ऽप्यशेषैर्दोषैः स्वैरपि च बलितो दुर्म्मतिरपि ।
प्रसादाद्यस्यैवाविदमहह राधां व्रजपतेः
कुमारं श्रीवृन्दावनमपि स गौरः मम गतिः ॥

अर्थ—मैं सर्व्वगुण विहोन हूँ, और अशेष दोषों की आकर होने पर भी अखिल जीवों के मध्य में मैं एकमात्र अधमतम हूँ, और दुर्मति होने पर भी जिनकी कृपा से श्रीराधागोविन्द और श्रीवृन्दावनतत्त्व अवगत हुआ, वे श्रीगौर ही मेरी एकमात्र गति हैं।

श्रीलरसिकानन्दप्रभुकृतभागवतबन्दनायाम्—

आलोकामृतदानतो भवमहाबन्धं नृणां छिन्दतः
स्पर्शात् पादसरोजशौचपयसां तापत्रयं भिन्दतः ।
आलापाद्व्रजनागरस्य पदयोः प्रेमाणमातन्वतो
वन्दे भागवतानिमाननुलवं मूर्ध्ना निपत्य क्षितौ ॥

अर्थ—मैं भूमिपर गिरकर मस्तक के द्वारा इन समस्त भागवतों की बन्दना करता हूँ। कारण ये सभी दर्शनामृत दान से मनुष्यगण के भवमहाबन्धन छेदन करते हैं। पादपद्म धौत जल का स्पर्श देकर नरसमूह के तापत्रय का विनाश करते हैं, एवं आलाप के द्वारा व्रजनागर श्रीकृष्ण के चरणों में प्रेम वर्द्धन करा देते हैं।

सर्व्वेषां भक्तिशास्त्राणां पद्यानि तु स्वतुष्टये ।
संगृहीतानि चारूणि विज्ञेयानि मनीषिभिः ॥
रचिता कृष्णदासेन गोवर्द्धननिवासिना ।
केनचिदतिमुग्धेन साधनामृतचन्द्रिका ॥

अर्थ—स्वतुष्टि के लिए मैंने समस्त भक्तिशास्त्रों से मनोहर पद्यसमूह का संग्रह कर पूर्वोत्तर दोनों ग्रन्थों में ही सन्निवेशित किया है, गोवर्द्धन निवासी कृष्णदास नाम से किसी एक अतिमुग्ध व्यक्ति ने "साधनामृत चन्द्रिका" की रचना की है।

परमकरुणार्णव-श्रील-नरोत्तमदास-नामधेय-ठक्कुरमहाशय-
भृत्यानुभृत्य-श्रीकृष्णदासेन रचिता साधनामृत-
चन्द्रिका समाप्ता ।

ख-वाणाश्वंकशाके चैत्रे गोवर्द्धनान्तरे ।
द्वादश्यां सौम्यघस्त्रेऽयं ग्रन्थ सम्पूर्णतामगात् ॥

अर्थ—यह श्रीग्रन्थ १७५० शकाब्द चैत्रमास में द्वादशी तिथि बुधबार श्रीगोवर्द्धन के मध्य (मानसीगङ्गातट) में सम्पूर्ण हुआ ।

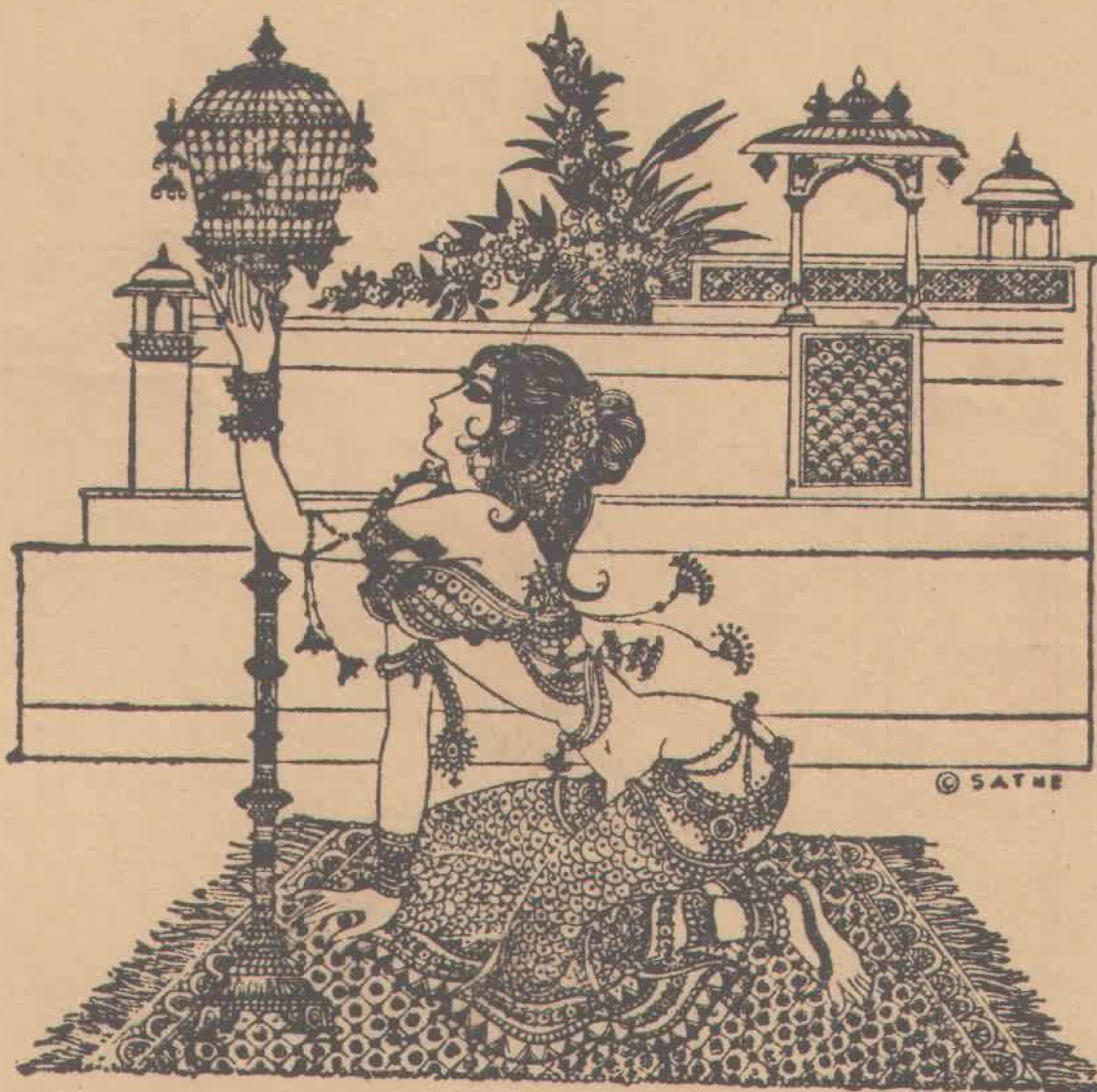
★ इति ★










© SATHE



* श्रीसाधनामृत चन्द्रिका
  (पद्धति ग्रन्थ)
* श्रीगोविन्दलीलामृत
  (मूल, टीका, अनुवाद) ,,
* वेदान्त दर्शनम्
  (श्रीमद्‌भागवत भाष्योपेतम्) ,,
* ईशाद्यष्टोपनिषद्
  (भाष्य, अनुवादसह) ,,
* श्रीमद्‌भागवत स्तुति संग्रह ,,
* श्रीमद्‌भागवत गीतसंग्रह ,,
* अध्याय दीपिका
  (श्रीधरस्वामिकृत श्रीमद्‌भागवत अध्यायार्थ संग्रह) ,,

=प्राप्ति स्थान=

श्रीहरिदासशास्त्री
श्रीहरिदास निवास
कालीदह-वृन्दावन ।

